दिव्यता पवित्रता खुशी

संजय की कलम से

रक्षा-बंधन

एक तात्विक विवेचन

रक्षाबन्धन प्रत्येक वर्ष श्रावण शुक्ला पूर्णिमा को बड़े समारोह के साथ भारतवर्ष तथा विश्व के अन्य भागों में प्रवासी भारतीयों द्वारा मनाया जाता है। पूर्ण चन्द्र, जो परिपूर्णता और अमरत्व का प्रतीक है, श्रवण नक्षत्र में इसी समय रहता है। अत: ऋतु और काल की दृष्टि से रक्षाबन्धन ब्राह्मणों का प्रधान पर्व है। सारे समाज की कल्याण कामना में निरत रहते हुए, मानव की सर्व विकारों एवं तज्जनित दुखों से रक्षा करना ब्राह्मणों का कर्त्तव्य है और इसी शुभ-कामना और शुभाशय से प्रेरित होकर वे इस दिन रक्षाबन्धन का अनुष्ठान करते हैं।

त्यौहार के पीछे पौराणिक कथा

पौराणिक कथा के अनुसार देवराज इन्द्र और दैत्यराज वृत्र के मध्य बारह वर्षों तक भयंकर युद्ध हुआ। इस युद्ध में असुरों ने देवताओं पर विजय पाई। पराजित देवगण श्रीहीन और सर्व अलंकार, धर्म एवं संस्कार-विहीन होकर जीवन-यापन करने लगे। इस गौरवहीन क्लीव-क्षीव जीवन से देवराज इन्द्र ने मरना श्रेयस्कर समझा और असुरों से अन्तिम एवं प्राणान्त युद्ध करने का संकल्प किया। वह श्रावण शुक्ला चतुर्दशी का दिन था। अत: देवगुरु बृहस्पति ने अगले दिन (श्रावण मास की पूर्णिमा के शुभ मुहूर्त में) कल्याण एवं विजय की कामना से इन्द्र को रक्षा का बन्धन बाँधते हुए निम्न मंत्र पढ़ा –

येन बद्धो बली राजा दानवेन्द्रो महाबल:।
तेन मन्त्रेण बध्नामि रक्षे मा चल मा चल।।

तत्पश्चात् इन्द्राणी ने मंगलाचरण के साथ इन्द्र के दाहिने हाथ में रक्षा-सूत्र बाँधा और इन्द्र विजयी हुए।

❀ अमृत सूची ❀

- धर्म और कर्म में सन्तुलन (सम्पादकीय) 5
- श्रद्धांजलि...................... 7
- प्रश्न हमारे, उत्तर दादी जी के.. 8
- दादी प्रकाशमणि जी के दिए.. 10
- सहज राजयोग की सहज 12
- 'पत्र' संपादक के नाम 13
- भगवान की सर्वोत्तम रचना ... 14
- दृढ़ संकल्प बनाता है विजयी . 16
- इतिहास के अनछुए पन्ने...... 17
- रूहानी सर्जन की............ 19
- कर्मों की गुह्यगति 20
- भावभरी श्रद्धांजलि (कविता) 22
- पारसमणि थीं दादी........... 23
- चिन्ता, समस्या, पीड़ा 25
- भाग्य का बीज है संकल्प..... 26
- सचित्र सेवा समाचार 27
- संगीत का असर 28
- कर्म द्वारा गुणों का दान 29
- सचित्र सेवा समाचार 30
- आध्यात्मिकता............... 32
- इक्कीस जन्मों.. (कविता) ... 33
- जिसका साथी है भगवान..... 34

सदस्यता शुल्क

भारत	वार्षिक	आजीवन
ज्ञानामृत	100 /-	2,000/-
वर्ल्ड रिन्युअल	100/-	2,000/-
विदेश		
ज्ञानामृत	1,000 /-	10,000/-
वर्ल्ड रिन्युअल	1,000/-	10,000/-

शुल्क केवल 'ज्ञानामृत' अथवा 'द वर्ल्ड रिन्युअल' के नाम से ड्राफ्ट या मनीऑर्डर द्वारा भेजने हेतु पता है- संपादक, ओमशान्ति प्रिंटिंग प्रेस, ज्ञानामृत भवन, शान्तिवन- 307510 (आबू रोड) राजस्थान।

शुल्क के लिए सम्पर्क करें -
09414006904, 09414423949
hindigyanamrit@gmail.com

शास्त्रों में इस पर्व का महात्म्य

रक्षाबन्धन के महात्म्य पर धर्मशास्त्रों में विस्तार से लिखा है। एक स्थल पर आया है,

सर्वरोगोपशमनं सर्वाशुभविनाशनम्।
सकृत्कृतेनाब्दमेकं येन रक्षाकृतोभवेत।।

अर्थात् यह रक्षाबन्धन सर्व व्याधियों का विनाश करने वाला एवं सर्व अशुभों को नष्ट करने वाला है। जो व्यक्ति इसका अनुष्ठान करता है वह सभी विकारों से मुक्त रहता है। शास्त्रवादी लोग मानते हैं कि इन्द्राणी द्वारा इन्द्र के इस प्रकार रक्षा-सूत्र बाँधने को लेकर ही कालान्तर में बहनों द्वारा भाइयों को रक्षा बाँधने की प्रथा चल निकली होगी। कुछेक का यह विचार है कि पत्नी को तो दान-दक्षिणा आदि दी नहीं जाती अत: सौभाग्यवती मूर्तिमान् कल्याणाकांक्षिनी बहन से राखी बँधवाकर उसका शुभाशीर्वाद लिया जाए – यह सोचकर राखी का त्यौहार शुरू हुआ होगा। रानी कर्मवती ने बादशाह हुमायूँ को राखी भेजकर संकट के समय अपना भाई बनाया था।

क्या यह त्यौहार भाई द्वारा रक्षा की याचना का प्रतीक है?

यह समझना कि राखी बाँधकर बहन, भाई से संकट के समय अपनी रक्षा का प्रण करवाती है, उचित नहीं प्रतीत होता है। उपर्युक्त पौराणिक कथानुसार बृहस्पति और इन्द्राणी ने इन्द्र की रक्षार्थ रक्षा बाँधी थी, न कि स्वयं की रक्षा के लिए। यह उचित है कि इन्द्र की सुरक्षा और हित में उन दोनों की सुरक्षा भी सन्निहित थी।

भारतीय नारी प्राचीन काल से ही शक्ति, सामर्थ्य और सहिष्णुता की साक्षात् प्रतिमा मानी गई है। उसका आदर्श स्वरूप सीता और लक्ष्मी में द्रष्टव्य है। नारी का अबला रूप एक परवर्ती विचारधारा है और मध्यकाल में बर्बर विदेशी आक्रमणकारियों तथा भारतीयों की पारस्परिक फूट की उपज है। कभी-कभी तो किसी कन्या या स्त्री का अपना कोई भाई नहीं होता, या वह सुदूर देश का निवासी होता है अथवा वय में बहुत छोटा, दुर्बल और निर्धन हो सकता है अर्थात् बहन की रक्षा करने में वह पूर्ण रीति असमर्थ हो सकता है। ब्राह्मण भी इस अवसर पर अपने यजमानों को राखी बाँधते हैं परंतु उनमें भी यजमानों द्वारा अपनी रक्षा की कोई भावना नहीं होती। अत: यह निष्कर्ष निकाल लेना कि बहनें, भाइयों को संकट में अपनी रक्षा की कामना से रक्षा बाँधती हैं, उचित नहीं प्रतीत होता है।

वास्तविक महत्त्व

तात्विक दृष्टि से इस पर्व का वास्तविक और आध्यात्मिक महत्त्व कुछ भिन्न ही है। रक्षाबन्धन को 'पुण्य प्रदायक' और 'विषतोड़क' पर्व भी कहा गया है। काम वासना ही वह भयंकर विष है जिसे पवित्रता और ब्रह्मचर्य के द्वारा जीता जा सकता है। अत: रक्षाबन्धन इन्द्रियजय, देवत्व, पवित्रता और ब्रह्मचर्य के व्रत लेने का पुण्य पर्व है अर्थात् स्वयं को तथा अन्य व्यक्तियों को आत्मा समझते हुए, देह एवं देह के आकर्षणों से परे, पवित्र जीवन जीते हुए, मन की आसुरी वृत्तियों और संकल्पों पर विजय पाने का प्रतीक है।

पवित्र बनो, योगी बनो

रक्षाबन्धन मर्यादा और आत्मनिग्रह द्वारा मृत्यु पर विजय पाने का पर्व है। रक्षा-सूत्र का बन्धन और तिलक इस उत्सव का प्रमुख विधान है। सूत्र आत्मा की मर्यादा और संयम का प्रतीक है, तो तिलक आत्मस्वरूप में स्थित होने का प्रतीक। रक्षाबन्धन हमें आत्मिक दृष्टि अपनाने अर्थात् सबको स्थूल दृष्टि से स्त्री व पुरुष न देखकर आत्मा या भाई-भाई अथवा भाई-बहन समझने की प्रेरणा देता है। इस सात्विक दृष्टि-वृत्ति के लिए पवित्रता का पालन आवश्यक है। पवित्रता के द्वारा ही हम भाई-बहन के पावन सम्बन्ध को वास्तविक और व्यापक स्वरूप प्रदान कर सकते हैं तथा सच्चे देवपद के अधिकारी बन सकते हैं। परमात्मा है ही पतित पावन। उन सदाशिव परमात्मा तक पहुँचने के लिए पवित्रता ही एकमात्र सोपान है। पवित्रता ही सुख-शान्ति और समृद्धि की जननी है। अत: रक्षाबन्धन का सन्देश है 'पवित्र बनो, योगी बनो'। पवित्रता और योग ही जीवन है तथा अपवित्रता और वियोग मृत्यु। ❖

सम्पादकीय ..

धर्म और कर्म में सन्तुलन

धर्म का अर्थ है धारणा। व्यवहारिक जीवन में उच्च नैतिक मूल्यों की धारणा जिससे मानव का चरित्र ऊँचा हो, अन्य मनुष्यों से वह सद्व्यवहार करे, कर्त्तव्य का पालन करे – इसे ही धर्म कहते हैं। धर्म मनुष्य में शान्ति, शीतलता, सेवा, धीरज, त्याग, सहानुभूति, आत्मकल्याण, परोपकार, सादगी, सद्विचार और निर्विकार जीवन की भावना जागृत करता है। तभी उसकी आस्था सर्वशक्तिवान कल्याणकारी पिता परमात्मा शिव में दृढ़ होती है और उनके प्रति मन आकर्षित होता है।

बिना धर्म के कर्म ऐसे ही हैं जैसे बिना बीज के छिलका

हमने कई बार किसी उम्रदराज माता या भाई के मुख से इस प्रकार की बात सुनी होगी कि इतने वर्ष (50 या 60 या 70 या कितने भी) कर्म करने के बाद भी क्या मिला, कुछ नहीं। हमने संसार में, परिवार में, घर में इतना कुछ किया, मेहनत की पर पाया क्या? कुछ नहीं। मुख की यह बात इशारा कर रही है कि हमें अपनी मेहनत का, कर्मों का उम्मीद से कम फल मिला है, क्यों? आइये देखें, हमारे बोए बीजों में कोई कमी तो नहीं थी? यह अकाट्य सत्य है कि जब कर्म के साथ धर्म जुड़ता है तो कर्म की कीमत कई गुणा बढ़ जाती है। कर्म करना कोई बड़ी बात नहीं पर धर्म के साथ अर्थात् दिव्य गुणों के साथ कर्म करना बड़ी बात है। बिना धर्म के कर्म ऐसे ही हैं जैसे बिना बीज के छिलका (भूसा)। बाजार में भूसे की कीमत कितनी है? कोई ऊँट गाड़ी, घोड़ा गाड़ी या बड़ा ट्रक भरकर भी भूसा ले जाए तो भी बदले में मिलने वाले रुपये गाड़ी भरकर नहीं मिलते, बहुत थोड़े मिलते हैं पर दाने तो थोड़े भी बेचे जाएँ तो बहुत कीमत मिल जाती है। कर्म भी यदि धर्म को भूलकर किए जाते हैं तो भले ही हम 8 घन्टे, 16 घन्टे, 18 घन्टे करते हों पर उन धर्महीन कर्मों की भूसे की तरह कम कीमत मिलती है अर्थात् हम लगे रहते हैं सारा जीवन पर सन्तोषजनक फल फिर भी नहीं मिलता। यदि हम धर्म के साथ कर्म करें तो ऐसे कर्मों की कीमत कई गुणा बढ़ जाती है जो वर्तमान को सुखी बनाने के साथ, भविष्य के अनेक जन्मों की श्रेष्ठ प्रालब्ध बना देते हैं।

धर्म के साथ कर्म करने के उदाहरण

हमने मकान बनाने का कर्म किया। हम इसी मकान में एक कोना बना दें जहाँ धर्म की अर्थात् गुणों की, त्याग की, दया की, प्रेम की, शान्ति की चर्चा हो, इन गुणों के सागर परमात्मा को स्मरण करने की व्यवस्था कर दें तो यह कर्म के साथ धर्म का सन्तुलन होगा। हमने भोजन बनाने का कर्म किया। इसी कर्म के साथ हम भोजन में प्यार, शुभभावना, अनासक्ति के प्रकम्पन भर दें और इन गुणों के दाता भगवान शिव को भोजन अर्पण कर उसके गुणों का चिन्तन करते हुए भोजन खाएं तो यह कर्म के साथ धर्म का सन्तुलन होगा। सारे दिन कर्म करते हुए हम बार-बार चेक करें कि मुझसे प्रेम, स्नेह, दया, त्याग, क्षमा, उदारता, नम्रता आदि आत्मिक धर्म छूट तो नहीं गए। हर कर्म में इन गुणों की खुशबू भरना ही कर्म को मूल्यवान बनाना है। ऐसे कर्म करने पर हम अपने को बहुत भाग्यवान और सन्तुष्ट महसूस करेंगे।

धर्मसंकट अर्थात् धर्म का संकट में पड़ जाना

कई बार हम कहते हैं, मैं धर्मसंकट में हूँ, कभी कर्मसंकट नहीं कहते। धर्मसंकट का अर्थ है कि कोई कार्य ऐसा है जिसको करते हुए मेरा धर्म, मेरी धारणा संकट में पड़ रही है। मान लीजिए, कोई व्यक्ति किसी से कोई लेन-देन का पक्का वायदा करता है पर तभी उसे अधिक धन प्राप्त कराने वाली कोई अन्य ऑफर आ जाती

है। अब वह अपने को धर्मसंकट में पाता है कि वचन निभाए या वचन तोड़कर अधिक धन प्राप्त कर ले। उसके वचन की सत्यता, विश्वसनीयता संकट में पड़ रही है। मान लो वह लाभ स्वीकार कर लेता है, इसका अर्थ है कि उसने धन तो पा लिया पर सत्यता, विश्वसनीयता रूपी धर्म छोड़ दिया। अल्पकाल के लिए उसे इस में खुशी महसूस हो सकती है पर बार-बार मूल्यविहीन कर्म करने के कारण आत्मा से सच्चाई का बल निकल जाएगा और कालान्तर में वह भीतर से कमजोर, खोखला होकर नकारात्मकता से भर जाएगा। जो धन पाया होगा उसका ठीक से प्रबंधन करने के लिए आत्मा का बलवान होना जरूरी है। धन पाने के लिए आत्मा को कमजोर कर लिया तो अब प्राप्त धन का प्रबंधन करने के लिए बल अथवा सूझ कहाँ से आएगी? सूझ के अभाव में वह धन गलत कार्य में लगेगा, उसका दुरुपयोग होगा जिसे देख मानव दुखी होगा और फिर यही कहेगा, मैंने सारा जीवन मेहनत की पर मुझे मिला क्या? वास्तव में कर्म करके हम अपने भीतर धर्म को मजबूत करते हैं, यही हमारी प्राप्ति है। जब धर्म ही छोड़ दिया हो मिलना क्या है?

दुनिया न सही, दुनिया बनाने वाला मान्यता देता है

जब हम कर्म के साथ धर्म को जोड़ने की बात करते हैं तो कइयों के मन में सवाल आता है कि आज की दुनिया कर्म को मान्यता देती है पर धर्म अर्थात् श्रेष्ठ धारणा को तो वह किनारे कर देती है। परन्तु हम विचार करें, हमारे आस-पास कोई ऐसा स्कूल हो जिसको सरकारी मान्यता प्राप्त न हो तो क्या हम बच्चों को पढ़ाना बन्द कर देंगे, अन्य शहर के मान्यता प्राप्त स्कूल की खोज करेंगे और थोड़ा कष्ट उठाकर, थोड़ा ज्यादा खर्च करके भी, बच्चों को उसमें पढ़ाएंगे अवश्य। इसी प्रकार हमारे शहर में चीजों की कोई मान्यता प्राप्त कम्पनी ना हो तो क्या हम चीजें खरीदना छोड़ देगें? दूसरे शहर से ले आएंगे जहाँ मान्यता प्राप्त (गारंटीशुदा) चीजें मिलती हों बेशक समय, शक्ति, धन ज्यादा व्यय करने पड़ें। इसी प्रकार दुनिया हमारे धर्मयुक्त कार्यों को मान्यता नहीं देती तो क्या हम उन्हें करना छोड़ दें। यह दुनिया की कमजोरी है। किसी की कमजोरी के शिकार हम क्यों बनें? दुनिया ना सही, दुनिया बनाने वाला तो मान्यता देगा। कर्मों का फल तो उसी ने देना है, तो क्यों ना हम उसी के द्वारा निर्धारित स्टैन्डर्ड के अनुसार कर्म करें।

कर्म रूपी उत्पाद को हीरे-तुल्य बनाइये

हर मानव अपने उत्पाद को ऐसा बनाना चाहता है जिससे ज्यादा कीमत मिले। कर्म भी हमारा उत्पाद है। हम इसे इतना घटिया क्यों बनाएँ कि ये कौड़ियों के भाव बिके। हम इसे ऐसा बनाएँ जो यह हीरों के भाव बिके अर्थात् हीरेतुल्य कर्म बने, इसके लिए कर्म के साथ धर्म का सन्तुलन अनिवार्य है। हम बोलचाल की भाषा में हमेशा कहते हैं कि आज का मानव धर्म-कर्म को भूल गया है इसका अर्थ है कि धर्मयुक्त कर्म को भूल गया है। कर्म तो वह करता ही है पर अब उनमें परमार्थ निकल गया, स्वार्थ भर गया। बड़ों की शर्म-हया निकल गई, बेशर्मी भर गई। सच्चाई निकल गई, झूठ भर गया। ईमानदारी निकल गई, बेईमानी भर गई। इस प्रकार धर्महीन कर्म मूल्यहीन हो गए और मानव ऐसे कर्मों की गठरी ढो-ढो कर हाँफ रहा है पर न सुख मिलता है, न शान्ति, न चैन मिलता है, न आराम।

धर्महीन कर्म पर धर्मयुक्त कर्म की जीत

एक व्यक्ति घर में कारखाना चलाता है, उसके पड़ोसी का शहर से दूर फलों का बगीचा है। एक दिन कारखाने की सफाई होती है और कचरा यहाँ-वहाँ डाल दिया जाता है। कचरे की एक बाल्टी पड़ोसी के घर के आगे भी फेंक दी जाती है। पड़ोसी देखकर भी अनदेखा कर देता है और अपने बगीचे में चला जाता है। वहाँ से ताजे फलों का टोकरा लेकर आता है। शाम को कारखाने वाले का द्वार खटखटाता है। वह डर जाता है कि शायद पड़ोसी लड़ने आ रहा है, घबरा कर दरवाजा खोलता है पर पड़ोसी को सामने मुसकराते हुए खड़े देख थोड़ा आश्चर्यचकित होता

है। पड़ोसी फलों का टोकरा आगे बढ़ाते हुए कहता है, ताजे फल हैं मेरे बगीचे के, परिवार सहित आनन्द उठाइये। कारखाने वाला मन ही मन अपनी गलती स्वीकार करता है, उससे माफी मांगता है, फल ले लेता है और आगे से अपने व्यवहार को सुधार लेता है।

किसी ने ठीक ही कहा है, 'हम किसी को जो कुछ देते हैं इससे पता पड़ जाता है कि हमारे पास क्या है?' उपरोक्त दृष्टान्त में, एक ने कूड़ा दिया और दूसरे ने फल दिये। क्योंकि एक के पास वही चीज थी देने को और दूसरे के पास स्वादिष्ट फल थे देने को। हम दूसरे के धर्महीन कर्म को देखकर अपने धर्मयुक्त कर्म कभी न छोड़ें क्योंकि अन्त में जीत धर्म की ही होगी।

शिव भगवानुवाच – जैसे आत्मा और परमात्मा के टूटे हुए सम्बन्ध को बाप ने जोड़ लिया, ऐसे धर्म और कर्म के सम्बन्ध को भी जोड़ लो तब धर्मात्मा प्रत्यक्ष होंगे। जैसे कर्मयोग कर्म और योग का मेल है, जैसे झूला झूलने में दोनों रस्सी जरूरी होती हैं, अगर एक को छोड़ दें, अगर एक टूट जाए वा नीचे ऊपर हो जाए वा छोटी-बड़ी हो, समान न हो तो क्या हाल होगा! ऐसे ही धर्म और कर्म दोनों के मेल से सर्व प्राप्तियों के झूले में झूलते रहेंगे।

– ब्र.कु. आत्म प्रकाश

श्रद्धांजलि

हम सबके अति स्नेही, साकार मात-पिता, दीदी, दादी के हस्तों से पले, सेवा के आदि रत्न ओमप्रकाश भाई (रेलवे डिपार्टमेन्ट), मधुबन, 5 जुलाई, 2016, मंगलवार दोपहर 3.30 बजे ग्लोबल हॉस्पिटल में अपने भौतिक शरीर का त्याग कर बापदादा की गोदी में चले गये। आपने 1954 में दिल्ली-कमला नगर सेवाकेन्द्र से ज्ञान प्राप्त किया। आप 1973 में मधुबन तपोभूमि में समर्पित हुए। दीदी मनमोहिनी जी के साथ सेवा में आपका विशेष पार्ट रहा। आप बाल ब्रह्मचारी, एक की लगन में सदा लवलीन, अथक सेवाधारी, निमित्त और निर्माण के बैलेन्स द्वारा यज्ञ में अनेक प्रकार की सेवायें देते रहे। आपने पहले-पहले लिट्रेचर डिपार्टमेन्ट के साथ रेलवे की सेवायें सम्भाली। ट्रांसपोर्ट विंग के अध्यक्ष के पद पर भी सेवायें देते रहे।

आप ज्ञान-योग की पढ़ाई में रेग्युलर और पंक्चुअल थे। आपके शरीर की आयु 82 वर्ष थी। ऐसी विशेष महान आत्मा को पूरा दैवी परिवार स्नेह से श्रद्धांजलि अर्पित करता है।

घुटनों व कूल्हों की प्रत्यारोपण सर्जरी नियमित हर महीने के अंतिम सप्ताह में की जाती है।

सर्जरी यू.के., ऑस्ट्रेलिया और जर्मनी से प्रशिक्षित, मुम्बई के कुशल एवं अनुभवी सर्जन डॉ. नारायण खण्डेलवाल द्वारा की जाती है। अग्रिम चेकअप तथा सर्जरी की तारीख जानने के इच्छुक मरीज संपर्क करें:

डॉ. मुरलीधर शर्मा, ग्लोबल हॉस्पिटल, माउंट आबू, राजस्थान। मोबाइल: 09413240131

फोन: (02974) 238347/48/49 वेबसाइट: www.ghrc-abu.com

फैक्स: (02974) 238570 ई-मेल: drmurlidharsharma@gmail.com

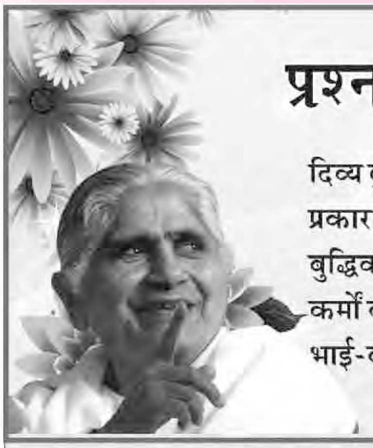

प्रश्न हमारे, उत्तर दादी जी के

दिव्य बुद्धि के वरदान से विभूषित आदरणीया दादी जानकी जी, हर प्रकार के प्रश्नों के उत्तर देकर आत्मा को संतोष से भर देती हैं। बुद्धिवानों की बुद्धि बाबा ने उन्हें ऐसी कला प्रदान की है कि वे उलझे कर्मों की गुत्थियाँ सुलझाकर समाधानस्वरूप बना देती हैं। प्रस्तुत हैं भाई-बहनों द्वारा पूछे गए प्रश्नों के दादी जानकी द्वारा दिये गये उत्तर

– सम्पादक

प्रश्नः- दादी जी, वो अनुभव सुनाइये जब बाबा की करंट ने आपको अशरीरी बना दिया?

उत्तरः- एक बारी बाबा अपने कमरे में गद्दी पर बैठे थे, सामने मैं बैठी थी, बाबा बहुत अच्छे लग रहे थे। ऐसे अच्छे लग रहे थे जो वहाँ से हटने को जी नहीं चाहता था। दीदी ने कहा, बाहर बहुत खड़े हैं। तो बाबा ने कहा, बच्ची, ठहरो, अभी सत्यनारायण की कथा चल रही है। उस घड़ी ऐसी भासना आई जैसे मैं सत्यनारायण स्वामी के सामने बैठी हूँ। फिर कहा, यहाँ बाजू में आकर बैठो। बाजू में बैठने से ऐसी करेन्ट आई जिसने अशरीरी बना दिया। जब कभी मैं पाण्डव भवन में होती हूँ तो वह अनुभव याद आने लगता है और मेरे साथ जो विदेशी बहन-भाई होते हैं, मैं उनको कहती हूँ, गद्दी पर बैठ करके यह भासना ले लो। तो यह जो पुरुषार्थ है, शरीर में रहते भी अशरीरी रहना और ट्रस्टी रहना यानी सिम्पल रह करके सैम्पल बनना, इसमें कोई खर्च नहीं है। बाबा एक तरफ कहते हैं सिम्पल रहो, दूसरी तरफ कहते हैं तपस्वी रहो। फिर अव्यक्त रहो क्योंकि और कोई काम है ही नहीं, जहाँ भी पाँव रखो तो पाँव धरती पर नहीं हैं। सेवा भले करो पर तपस्या भी करो। याद में रहना है तो कैसे रहना है! हमारा योग ऐसा हो जो और कोई बात याद न आये। सवेरे की बात शाम को याद नहीं। ऐसा योगयुक्त रहना है जो कोई भी बाजू में बैठे तो खुश होकर जाये। यह समय बहुत अच्छा है, आपस में मिलकर रहना और बाबा की यादों में रहना। जितना हम आपस में मिल करके रहते हैं तो मुसकराते हैं। कभी-कभी मैं कहती, एक-दो को सामने ऐसे देखो और मुसकराओ, इससे बहुत फायदा हुआ है। पहले मुसकराना मुश्किल लगता था पर अभी मुसकराना सीख गये हैं। जिसको मुसकराना सहज है उसके लिए सब काम सहज हो जाते हैं। मैं बाबा के सामने हार्मोनियम बजाते गीत गाती थी तो बाबा खुशी में मुसकराते थे। हारमनी माना हार मानी, झगड़ा टूटा, सेवा में कभी जिद्द और सिद्ध नहीं। अभी मेरा तो धरती पर पाँव नहीं है, जो बाबा को कराना है, आपेही करा लेते हैं। जो हुआ सो अच्छा, जो होगा सो अच्छा, जो हो रहा है सो अच्छा।

प्रश्नः- नाज़ुक नेचर के क्या नुकसान हैं?

उत्तरः- कभी भी नाज़ुक नहीं बनना चाहिए, नाज़ुक नेचर होगी तो कोई कुछ कहेगा तो फौरन माइण्ड करेंगे, कहेंगे, मैं इनसे बात नहीं करूँगी क्योंकि सदा ही यह ऐसे बात करती है, ऐसी किसकी भी नेचर हो तो इस बड़ी भूल को आज रियलाइज करके फिर से यह भूल नहीं करना। दुःख देना, दुःख लेना बड़ी भूल है। बाबा मुझे कभी किसी के लिए कहते थे, बच्ची, इसे कोई भी तन की, मन की, धन की मुश्किलातें आवें तो मदद करना। तो मैं और कोई काम नहीं कर सकती हूँ लेकिन बाबा की जो प्रेरणा है वो काम तो करना चाहिए ना! इसमें जी बाबा कह करके करने से कैसा भी काम हो वो सहज हो जाता है। भले मेरे हाथ में पैसा नहीं था, पर आज्ञाकारी बनने से पता नहीं पैसा कहाँ से आ जाता

WIDEWALLPAPERS.NET

था, कोई निमित्त बन जाता था इसलिए जिगरी दिल कहता है, बाबा तेरा बनने में सुख मिलता इलाही है। हम सब अभी त्रिनेत्री, त्रिकालदर्शी, त्रिलोकीनाथ – तीनों लोकों के मालिक हैं। यह किसको नशा है? तीसरा नेत्र खुला रहने से बड़ा मजा आता है। त्रिकालदर्शी माना स्वदर्शन चक्रधारी बनना। बाबा ने पहले कैसे हमको प्यार किया वो सब हिस्ट्री याद आती है। कइयों को अभी भी बाबा के साथ का पुराना प्यार याद आता है। तो आप भी याद से पहले बाबा से प्यार करो, तो बाबा आपेही याद आयेगा। बाबा को प्यार करना माना बाबा की हर श्रीमत पर चलते रहना। मनमत वा परमत पर न चलें। ऐसी सेवा कराने के लिए बाबा ने निमित्त बनाया है। कोई-कोई आत्मा के प्रति भावना रहती थी कि यह बाबा की आज्ञाकारी बने और बाबा से प्यार पा करके, बाबा की याद में ईमानदार रहे। यज्ञ की अच्छी सेवा करके बाबा के दिल में बैठने की जगह बना लेनी चाहिए। बाबा के दिल में बच्चे और हम बच्चों के दिल में बाबा। शिव बाबा ने ब्रह्मा के शरीर रूपी रथ को ऐसा निमित्त बनाया है जो हमने कभी ब्रह्मा बाबा को ऊंची आवाज से बोलते नहीं सुना।

प्रश्नः- बाबा का प्यार, शिक्षाएँ, सावधानी हमें क्या सिखाती हैं?

उत्तरः- जो बाबा का प्यार मिला है, जो बाबा की शिक्षायें मिली हैं, जो सावधानी मिली है वो बहुत सुखदाई हैं। सावधानी माना कोई ऐसा कर्म न करूं जो बाबा को अच्छा न लगे। मैं आज आप सबको दिल से कहती हूँ कि बाबा का ऐसा शुक्रिया मानो जो बाबा ने हमें अपना बनाया है। अपना बनाके सेवाधारी, त्यागी, तपस्वी बनाया है। अगर जरा भी कहाँ संबंध वा पैसे आदि में त्याग-वृत्ति की कमी हो तो थोड़ा अपने आपको सम्भालो, सावधान हो जाओ। किसकी भी कम्पलेन्ट हो, गलती हो, वो देखते-सुनते, उसका असर हमारी शक्ल पर न आवे, यह सम्भाल करनी है। बाबा की याद से साइलेंस में, अशरीरी होने का अभ्यास और अनुभव करते रहो तो अन्त तक काम आता रहे। आप भी गुप्त योगी, सहयोगी, सहजयोगी जैसा बाबा कहते हैं, 'मामेकम्' 'मनमनाभव' होके रहो, कभी तनमनाभव, कभी धनमनाभव होके नहीं रहो, तभी सतयुगी दुनिया स्थापन करने के लिए निमित्त बन सकेंगे। जैसे कोई मरता है तो कहते हैं, स्वर्गवासी हुआ, इतनी स्वर्ग की महिमा है, हम वो स्वर्ग स्थापन कर रहे हैं इसलिए कितना ध्यान रखना पड़ेगा! यह सब करते भी निराकारी दुनिया में रहना है।

प्रश्नः- आप अपने आप से क्या प्रश्न पूछती हैं?

उत्तरः- अब घर जाना है, उससे पहले अभी विकर्माजीत बनना है। बाबा की याद के बल से विकर्माजीत बनना भाग्य हो गया है। बाबा कहते हैं, कोई भी ऐसा काम नहीं करो, ऐसी कोई भूल नहीं करो। विकर्माजीत, कर्मातीत बनना है या बने हो? मैं अपने से पूछती हूँ, एक-दो को देख दिल कहता है, भावना ऐसी है जो अब घर जाने के लिए जैसे हम तैयार हैं। शिवबाबा तो जन्म-मरण में नहीं आता परन्तु ब्रह्मा बाबा के साथ हमको घर ले जाने के लिए तैयार कर रहा है। मेरे को कहते हैं, फलानी डेट को यह करेंगे, मैं कहती हूँ, मुझे यह नहीं बोलो, कल क्या होगा, देखा जायेगा और जो हुआ सो अच्छा, जो होगा सो अच्छा, अब क्या करने का है? आज क्या करना है? विकर्माजीत कर्मातीत बनने की यह घड़ी है, बाबा बना रहा है। बाबा ने साकार में बहुत सेवायें की, ऐसे कर्म सिखलाये जैसे खुद करते हैं, बच्चे ऐसे कर्म करो। अभी अव्यक्त हो करके भी कितनी सेवायें कर रहे हैं। कराने वाले बाबा हैं, हमको निमित्त बनाया है। अव्यक्त बाबा कैसे हैं, ऐसे अव्यक्त बनने से फरिश्ते बन जायेंगे। जब हम फरिश्ते हो जायेंगे तो कोई भी देहधारी से रिश्ता नहीं रहेगा। साक्षी हो करके पार्ट प्ले करेंगे। मैं तीन बारी ओम् शान्ति इसलिए कहती हूँ, मैं का अभिमान और मेरे की अटैचमेन्ट से छूट जायें क्योंकि ये दोनों खतरनाक हैं, जिसके पास ये थोड़े-बहुत होवें, प्लीज़ खत्म करो। ❖

दादी प्रकाशमणि जी के दिए हुए दो मंत्र

ब्रह्माकुमारी हंसा, सैक्रामेन्टो, कैलिफोर्निया

शेक्सपियर ने कहा है, 'This world is drama stage and we all are actors' (संसार रंगमंच है और हम सब पार्टधारी हैं). विश्वभर के करोड़ों पार्टधारियों में दादी प्रकाशमणि विशेष भूमिका निभाने वाली विशेष आत्मा थी।

दादी प्रकाशमणि मेरी नजरों में साकार ब्रह्मा बाबा के जीवन का प्रतिबिंब थी। ड्रामानुसार मैंने ईश्वरीय ज्ञान अहमदाबाद में लिया और ईश्वरीय सेवाओं का कुछ समय गांधीनगर और मुम्बई में व्यतीत किया। साकार बाबा के अव्यक्त होने से पहले दादी जी की ईश्वरीय सेवा मुम्बई में थी। इसके कारण दादी जी अक्सर मुम्बई आती और उनसे मुलाकात होती। इस प्रकार, सदा मुसकराने वाली, सबके दिल को हल्का करने वाली दादी के साथ के अनुभव प्राप्त करने का बहुत अच्छा भाग्य प्राप्त हुआ। इस लेख द्वारा मेरा विनम्र प्रयास रहेगा कि मैं दादी जी की अनेक विशेषताओं और बहुमुखी प्रतिभा का अवलोकन कराऊँ।

बाबा के साथ गहरा तादात्म्य (तल्लीनता)

दादी को पहली बार प्यारे बाबा के घर मधुबन में देखा। उस समय उम्र छोटी थी और दादी का अलौकिक स्वरूप देखते ही कल्प पहले वाली स्मृति का दरवाजा खुल गया कि मैं भी इनकी ही साथी हूँ। दादी जी ने हाथ पकड़कर दृष्टि दी और मैं इस दुनिया से उस अलौकिक दुनिया में चली गयी। इस प्रकार मेरा स्थान भगवान के घर में निश्चित हो गया। इस पहली मुलाकात में ही दादी जी ने पक्का करा दिया – मेरा तो एक शिवबाबा दूसरा न कोई। दादी जी का

जीवन, प्यारे ब्रह्मा बाबा के रचे हुए यज्ञ के नियमों और दिनचर्या का साकार रूप था। वे मर्यादा की मूर्ति थी। इस बात ने मेरे जीवन पर गहरा प्रभाव डाला। दादी जी अमृतवेले 4.00 बजे पाण्डव भवन (आबू पर्वत) के हिस्ट्री हॉल में योग में आकर बैठती थी। जब 4.45 बजे योग पूरा होता तो हम सब मुड़कर दृष्टि लेने दादी जी के सामने बैठ जाते। तब ऐसा अनुभव होता था कि स्वयं बाबा नैनों से निहाल करने पहुँच गये हैं। दादी जी का बाबा के साथ गहरा तादात्म्य था।

बाबा के रंग में रंग देने वाली

एक बार मधुबन में हम कई कुमारियाँ दादी के साथ रूहरिहान कर रही थीं और दूसरे दिन बाबा की पधरामणि होने वाली थी। हमने दादी को पूछा, हम बाबा के लिये क्या करें? दादी ने कहा, बाबा को मीठी कोकी बहुत पसंद थी, कुमारियों को बनाकर खिलानी चाहिए। दूसरे दिन कोकी

बनाने की सारी तैयारी कर ली और जब रात्रि को 12.00 बजे बाबा को भोग स्वीकार कराने का समय हुआ तो हम सब कुमारियाँ किचन से गरम-गरम तीन-चार मीठी कोकी बनाकर ले आई जिन्हें दादी-दीदी ने बाबा को स्वीकार कराया और बाबा ने दादी-दीदी को स्वीकार कराया। उस समय पर दादी ने सब कुमारियों को भी बाबा के सामने बुलाकर, बाबा से मिलवाया और कहा, आप कुमारियाँ भी बाबा को खिलाओ। यह भी संगमयुग का सुहाना दृश्य बन गया कि हमने भगवान को भोग स्वीकार कराया और भगवान ने हमें स्वीकार कराया। दादी जी के दिल में सदा एक ही संकल्प रहता था कि सब आत्मायें बाबा के समीप पहुँचें, बाबा के रंग में रंग जायें।

बापदादा के सामने विद्यार्थी के रूप में

दादी जी अपने नाम के प्रमाण प्रकाश की मूर्ति थी। जब प्यारे बापदादा की पधरामणि होती थी तब वे बापदादा के सामने एक विद्यार्थी के रूप में पट पर बैठती थी और उसी रूप से बाबा की दृष्टि लेती तथा मुरली लिखती थी। हम भी बापदादा से मधुर मिलन मनाने जाते तो दादी के नजदीक बैठने का प्रयास करते थे। जब बाबा की पधरामणि होती थी तब दादी प्यार भरी एकाग्रता, तन्मयता में होती थी, उनके चारों ओर अलौकिक आभामंडल बन जाता था। हमें लगता था कि हम उस आभामंडल में समा जायें। दादी जी का ऐसा प्रकाशमान जीवन हम आज भी याद करते हैं।

भावनाओं का मान रखने वाली

सन् 1981 में किसी बड़े कार्यक्रम के निमित्त दादी जी का अहमदाबाद आना हुआ था। उसी समय मेरे लौकिक माता-पिता मधुबन में राजयोग शिविर करके आये थे और लौकिक भाई-बहनें भी यज्ञ के नजदीक संबंध-संपर्क में आये थे। सबने दादी जी को लौकिक घर पधारने के लिए निमंत्रण दिया। हम सबकी खुशी के लिए दादी जी लौकिक घर आये। ये आना भी दादी जी की सादगी, सरलता और निर्माणता का प्रतीक था। वे सबके दिल की भावनाओं का मान रखती थी। दादी जी के आगमन से पूरे परिवार को बाबा की छत्रछाया का अनुभव हुआ और लौकिक माता-पिता के अलौकिक जीवन को मजबूती मिली। दादी ने लौकिक पिता जी कान्तिभाई ठक्कर, जो व्यवसाय से एडवोकेट हैं, को भी बाबा के यज्ञ की कानूनी सेवाओं में लगा दिया और लौकिक बहन ब्र.कु.मीना को ग्लोबल हॉस्पिटल की सेवा में लगा दिया।

अचल-अडोल स्थिति

सन् 1983 में जब बड़ी दीदी मनमोहिनी जी मुम्बई में हॉस्पिटल में थी, तब मैं आत्मा गामदेवी सेवाकेन्द्र पर सेवारत थी। उस समय दादी जी की अनोखी प्रशासन कला और ईश्वरीय परिवार को संभालने की निराली रीति का अनुभव हुआ। बड़ी दीदी यज्ञ की पिल्लर थी और दादी जी की साथी थी। उनके हॉस्पिटल में होने के कारण दादी जी का एक पाँव जैसे कि मधुबन में और दूसरा हॉस्पिटल में रहता था। वे दो दिन मधुबन में रहती और दो दिन के लिये मुम्बई में आती थी। इतना सब करते भी अचल-अडोल अवस्था द्वारा पूरे यज्ञ को स्थिरता का पाठ पढ़ाती। हम दादी को एयरपोर्ट लेने जाते और छोड़ने जाते। जिस दिन बड़ी दीदी अव्यक्त हुए उस दिन शाम को दादी को पूरे भारतवर्ष के सभी वरिष्ठ भाई-बहनों को और मधुबन में भी उनके अंतिम संस्कार का समाचार देना था। दादी जी ने कहा, हंसा, तुम मुझे नंबर मिलाकर दो। मैं नंबर मिलाकर दादी जी को देती गई और दादी जी सबको समाचार देती रही। वे गंभीरता की मूरत बन कार्य कर रही थी। मुझे याद आया, जब ब्रह्मा बाबा अव्यक्त हुए थे तब भी दादी जी ने सब जगह फोन लगाए थे। उसी प्रकार बड़ी दीदी अव्यक्त होने पर भी दादी जी ने यह पार्ट बजाया। मैं साकार बाबा से नहीं मिली लेकिन दादी की यह सेवा देखने का और अनुभव करने का पार्ट हर कल्प के लिये निश्चित हो गया। यह सेवा पूरी करके दादी जी जब आराम के लिए गये तब उनके चेहरे से विश्व महाराजन नारायण स्वरूप प्रतिबिंबित

हो रहा था।

फरिश्ता स्वरूप

एक गुरुवार को मैं मधुबन में थी, किसी काम के लिए दादी जी के कमरे में गई, वे अपनी खटिया पर बैठी कुछ लिख रही थी। मैंने दरवाजे से देखा कि दादी के बाल सफेद, ड्रेस सफेद और चेहरे पर चमकीला सफेद प्रकाश है। ऐसे लगा कि जैसे कोई फरिश्ता बैठा है। दादी का यह फरिश्ता स्वरूप भी सभी के मन को मोहने वाला था।

निर्माणता

एक बार की बात है, मेडिटेशन हॉल में क्लास थी। दादी को मेडिटेशन हॉल में ले जाने के लिए उनके हाथ में मेरा हाथ था। हाथ इतना नरम था जैसे कि ये हड्डी-माँस का है ही नहीं। जैसे योगी के अंग-अंग शीतल होते हैं, दादी जी शीतला स्वरूप थी। दादी जी के साथ निर्मलशांता दादी भी थी। जब दोनों दादियाँ मेडिटेशन हॉल में पहुँचे तो दादी जी, निर्मलशांता दादी को हॉल की बालकनी के पीछे ले गये और वहाँ से बाबा के ज्ञान-विज्ञान भवन, राजयोग भवन उन्हें दिखाते हुए कहने लगे, ये सब कार्य बाबा की रचना है। निर्मलशांता दादी ने कहा, ये आप निमित्त आत्माओं द्वारा कमाल हो रही है। दादियों की ऐसी मीठी रूहरिहान सुन मैं भी धन्य हो गई। बाबा के कार्य की जिम्मेवार होते हुए भी दादी में निर्माणता बहुत थी।

ड्रामानुसार जब भारत से बाहर सेवा अर्थ जाने का पार्ट हुआ तो दादी जी ने मुझे दो मंत्र दिये, 1. बाबा के प्रति एक बल एक भरोसा रखना और 2. हर कार्य रूहानियत से करना। ये दोनों मंत्र हमेशा याद रहते हैं और बाबा के साथ-साथ दादी जी भी अव्यक्त रूप में विश्व-सेवा में अपने साथ का अनुभव कराती रहती हैं। ❖

सहज राजयोग की सहज विधि

ब्रह्माकुमार विश्वनाथ साहनी (एडवोकेट),
साकेत नगर, भोपाल (म.प्र.)

आज जब भी कोई मनुष्य दुखी व अशान्त होता है तब वह किसी न किसी रूप में ईश्वर को अवश्य ही पुकारता है अथवा उससे अनुनय-विनय भी करता है लेकिन ईश्वर, बुराइयों तथा विकारों से दूर होने के लिए जो ईश्वरीय ज्ञान अथवा श्रीमत देते हैं, उससे परिचित न होने के कारण मनुष्य सच्ची सुख-शान्ति की अनुभूति नहीं कर पा रहा है।

वास्तव में ईश्वर तो हम सभी आत्माओं के परमप्रिय परमपिता हैं, उनसे अविनाशी सुख-शान्ति प्राप्त करना तो हमारा ईश्वरीय जन्म-सिद्ध अधिकार है लेकिन मनुष्य आत्माएँ ईश्वर को पाना अथवा उनसे संबंध स्थापित करना कोरी कल्पना मान बैठी हैं जबकि ईश्वर अथवा पिता से टूटे हुए सम्बन्ध को स्थापित करना बहुत ही सहज है। बस, उसके लिए सीखना होगा सहज राजयोग। राजयोग कोई कठिन क्रिया नहीं है बल्कि ईश्वर से संबंध जोड़ने की सहज विधि है। जैसे एक छोटे बच्चे को भी अपने पिता की याद स्वत: रहती है, उसे पिता की याद दिलानी नहीं पड़ती, उसके लिए उसे कोई साधना अथवा कठिन प्रक्रिया नहीं करनी पड़ती, ठीक उसी प्रकार, आत्मा बच्चे की तरह परमपिता को याद करे, यही सहज राजयोग है और मनमनाभव का सार है। योग का सामान्य अर्थ है जोड़, मिलन या संबंध। संसार की सभी चेतन वस्तुएँ योग और वियोग – दोनों से जुड़ी हैं इसलिए सांसारिक सम्बन्धों को योग नहीं कहा जा सकता। निरन्तर मिलन अथवा संबंध तभी सम्भव है जब दोनों ही वस्तुएँ अविनाशी एवं चिरस्थायी हों। इस सृष्टि-ड्रामा में मात्र दो ही चेतन चीजें अविनाशी एवं चिरस्थायी हैं। एक है आत्मा और दूसरा है परमात्मा। दोनों को ही अजर, अमर, अविनाशी एवं चिरस्थायी कहा गया है। अत: मनुष्य आत्मा का उस परमपिता परमात्मा से जुड़ना ही सहज राजयोग है। इसकी शिक्षा प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय की किसी भी शाखा से नि:शुल्क प्राप्त की जा सकती है। अभी नहीं तो कभी नहीं। ❖

'पत्र' संपादक के नाम

ज्ञानामृत पत्रिका का एक-एक लेख जीवन को हीरे तुल्य बनाने वाला होता है। दादी जी और बड़े भाई-बहनों के अनुभवयुक्त, ज्ञान की गहराइयों वाले सुंदर लेख, शिवबाबा के अनोखे कर्त्तव्य को प्रत्यक्ष करते हैं और भाई-बहनों के बाबा के साथ के अनुभवयुक्त लेख ईश्वरीय प्यार और पालना को प्रत्यक्ष करते हैं। भगवान के प्यार और ज्ञान को अपनी लेखनी द्वारा सुंदर शब्दों में प्रत्यक्ष करने वाली लेखक आत्माओं प्रति दो शब्द याद आ रहे हैं –

जहाँ ना पहुँचे रवि, वहाँ पहुँचे कवि।
जहाँ ना पहुँचे कवि, वहाँ पहुँचे अनुभवी।

ज्ञानामृत पत्रिका ज्ञान को बढ़ाने और पुरुषार्थ को तीव्र करने में बहुत उपयोगी सिद्ध हो रही है अत: लेखक भाई-बहनों को तहेदिल से बहुत-बहुत धन्यवाद!

– ब्र.कु.गीता, दिलशाद गार्डन, दिल्ली

ज्ञानामृत पत्रिका की जितनी प्रशंसा की जाये उतनी कम है। मई, 2016 के अंक में लेख 'स्वयं की तलाश', 'अंदर जाने वाली सूचना का महत्व', 'कोमल है कमजोर नहीं, शक्ति का नाम है नारी' 'क्षमा करो और जाओ भूल (संपादकीय लेख)' सुख-शांतिमय जीवन के लिए बहुत ही प्रेरणादायी हैं। ईश्वरीय ज्ञान के आधार पर भाई-बहनों के जीवन के अनुभव परमपिता शिव परमात्मा से संबंध जोड़ने के लिए प्रेरित करते हैं। लेखों के नीचे जो स्लोगन दिये जाते हैं, प्रशंसनीय हैं। संपादकीय लेख मनन-चिंतन के लिए फायदेमंद है।

– मधुकर कार्टरवाये, पवनी, जिला भंडारा

मई, 2016 के अंक में ब्रह्माकुमार रमेश भाई का ज्ञानयुक्त लेख 'संविधान के पूर्व का विश्व का इतिहास' पढ़कर बहुत प्रभावित हुआ। इसमें महत्व की तीन बातें बताई हैं – 1. स्व-पसंद, 2. लोकपसंद और 3. प्रभुपसंद। ये तीनों मनुष्य के जीवन में बहुत मायने रखती हैं। इन्हें आचरण में जरूर लाना चाहिए।

– लालजी भाई गोवेकर, मेहकर (महाराष्ट्र)

'ज्ञानामृत' पत्रिका सचमुच ज्ञान का अमृत सिद्ध हुई है। मैं एक सप्ताह का कोर्स पूरा करके प्रतिदिन सेवाकेन्द्र पर मुरली पढ़ने जाता हूँ। वहीं से मुझे 'ज्ञानामृत' पत्रिका प्राप्त हुई। मैं तहसील कार्यालय में कार्य करता हूँ। मुझे जब भी कार्यस्थल पर, घर पर समय मिलता है 'ज्ञानामृत' पढ़ता ही रहता हूँ। ज्ञानामृत पत्रिकाओं का बस्ता हर समय मेरे साथ रहता है। हर एक 'ज्ञानामृत' से बाबा के ज्ञान की वर्षा होती रहती है, धन्य है यह ज्ञानामृत! धन्य है शिवबाबा! 'जब बाबा मेरे साथ है, ज्ञानामृत मेरे हाथ है, डरने की क्या बात है।'

– ब्र.कु.रतन, सिकन्दराराऊ (हाथरस), उ.प्र.

'ज्ञानामृत' के अप्रैल, 2016 के सम्पादकीय लेख 'भौतिक और आध्यात्मिक अस्तित्व' में बताया गया है कि आत्मा की खुराक ही आध्यात्मिकता है। इसके बगैर आत्मा शान्त व सुखी नहीं रह सकती। लेख के द्वारा आत्मा की मूल योग्यताएँ – ज्ञान, पवित्रता, शान्ति, सुख, आनन्द, प्रेम और शक्ति को पाठकों तक पहुँचाया गया है। इन मूल योग्यताओं के बिना मानव सुख का अनुभव नहीं कर सकता। लेख सच्चे मार्ग पर चलने की सलाह दे रहा है। इससे मनुष्य आध्यात्मिक प्रवृत्ति को अपना कर ईश्वर से जुड़ेगा और स्वयं के भविष्य को उज्ज्वल बनायेगा।

– अत्तर सिंह, सूरजपुर (गोधा), अलीगढ़ (उ.प्र.)

यदि मन में सदैव शुद्ध भाव हैं तो कभी किसी बात का या परिस्थिति का प्रभाव नहीं पड़ेगा।

भगवान की सर्वोत्तम रचना – श्रीकृष्ण

इस संसार में यदि कोई बहुत ही सुन्दर होता है तो लोग कहते हैं, 'इसे तो भगवान ने अपने हाथों से रचा है।' कई ऐसा भी कहते हैं, 'इसे तो विधि ने खूब गढ़ा है।' कोई ऐसा भी कहते हैं कि 'ब्रह्मा जी अथवा विश्वकर्मा ने तो इस पर अपनी सारी कारीगरी लगा दी है' और लोग यह भी कहते हैं कि 'यह तो किन्हीं न्यारे ही तत्वों से बना है।' ऐसे ही न्यारे तत्वों से विधाता ने रचा था श्रीकृष्ण को। यदि आज भी वे एक घण्टे के लिए ही इस पृथ्वी पर साकार हो जायें तो सभी लोग उनका घेराव डाल लेंगे परन्तु उनके सौन्दर्य रूपी मंत्र से मुग्ध खड़ा हुआ एक भी व्यक्ति किसी अन्य ओर गर्दन को मोड़ेगा नहीं, न ही अन्य किसी को बुलाने के लिए जायेगा क्योंकि वह उस अत्यंत रम्य दृश्य को अपनी दृष्टि से ओझल नहीं होने देना चाहेगा। ऐसी कल्पनातीत और मनमोहक छवि थी श्रीकृष्ण की।

असल जाने बिना नकल कैसी?

उस सौन्दर्य की तो नकल भी नहीं हो सकती। अत: मूर्तिकार, पत्थर में जो उसकी आकृति गढ़ते हैं उसे 'प्रतिमा' कहा जाता है। 'प्रति' का अर्थ है 'नकल' अथवा कॉपी (Copy), 'मा' का अर्थ है 'न'। तो भावार्थ यह हुआ कि यद्यपि कोशिश की गयी श्रीकृष्ण के रूप की नकल करने की परन्तु हो न सकी। नकल हो भी कैसे सकती है, चित्रकार अथवा मूर्तिकार ने श्रीकृष्ण को न तो इन चर्म चक्षुओं से देखा है, न दिव्य दृष्टि से, तो वह श्रीकृष्ण की मूर्ति कैसे बना सकता है? असल ही मालूम न हो तो नकल कैसे की जा सकती है? फिर आज के संसार में उसकी कोई मिसाल भी नहीं है, वैसा रूपवान और गुणी भी कोई नहीं है तो मूर्ति कैसे बने? इसी प्रकार, जब लोग श्रीकृष्ण की झाँकियाँ अथवा स्वाँग बनाते हैं, उसका भी यही भाव होता है। झाँकियाँ या स्वाँग तो श्रीकृष्ण के रूप की अत्यंत क्षीण झलक-सी अथवा झाँकी-सी ही प्रस्तुत करते हैं। जब किसी बालक को श्रीकृष्ण का रूप देकर रंगमंच पर खड़ा किया जाता है तो उसे आप स्वाँग कह सकते हैं अर्थात् उसके अंग तो अपने (स्व) ही होते हैं, श्रीकृष्ण के अंग तो उससे बिल्कुल ही भिन्न होते हैं। नाटक में जो अभिनय (एक्ट) करता है, उसे 'पात्र' कहा जाता है परन्तु श्रीकृष्ण जैसा रूप रचने का 'पात्र' (योग्य) भला कौन है? उन जैसा तो न तन मिल सकता है, न उन जैसी कोई आत्मा ही अन्य है। ये तो श्रीकृष्ण की स्मृति दिलाने के लिए विभिन्न तरीके हैं परन्तु नाटक फिर भी नाटक है, असल फिर भी असल है। चैतन्य श्रीकृष्ण के दर्शन न कर सकने के कारण ही लोगों को उनकी यह झलक दिखाई जाती है परन्तु स्वयं श्रीकृष्ण के दर्शन तो तभी हो सकते हैं जब आँखें सतोगुणी हों और आँखें तभी सतोगुणी होंगी जब पहले मन सतोगुणी होगा।

श्रीकृष्ण पर धन न्योछावर

आज भी लोग श्रीकृष्ण की आरती करते हुए भाव-विभोर स्वर में गाते हैं – ''आरती युगल किशोर की कीजे, तन, मन,धन सब अर्पण कीजे।'' क्या कारण है कि लोग उस छोटे-से बालक को अपना तन, मन, धन सब-कुछ अर्पण करने के लिए तैयार हो जाते हैं? आपने देखा होगा कि श्रीकृष्ण किशोर का जब स्वाँग बनाया जाता है, तब लोग अपने

हाथ में नोट अथवा पैसे लेकर उस पर वारी-फेरी (न्योछावर) करते हैं। संन्यासियों या महात्माओं को जो धन वे देते हैं उसको तो वे 'दान' कहते हैं परन्तु श्रीकृष्ण पर जो धन वे न्योछावर करते हैं, उसे वे 'वारी-फेरी' कहते हैं अथवा ऐसा कहते हैं कि 'यह कृष्ण अर्पण है।' पैसा तो हरेक मनुष्य को प्यारा होता है परन्तु बिना माँगे वे श्रीकृष्ण की मूर्ति पर स्वेच्छा से अपनी जेब से निकाल कर डाल देते हैं हालांकि वे जानते हैं कि यह मूर्ति तो इन पैसों को उठाएगी नहीं। अवश्य ही उनके मन में श्रीकृष्ण के लिए बहुत ही सम्मान और स्नेह है। अवश्य ही वे श्रीकृष्ण को इतना उच्च मानते हैं कि उस पर वारी जाते हैं और उसकी पूजा करते हैं।

श्रीकृष्ण को अष्टांग प्रणाम

वैसे तो संसार में यह रिवाज है कि छोटी आयु के बच्चे बड़ों के आगे माथा झुकाते हैं परन्तु श्रीकृष्ण, चाहे कितनी ही छोटी आयु के क्यों न हों, उन्हें सभी बाल, वृद्ध और 'महात्मा' भी नमस्कार करते या अष्टांग प्रणाम करते हैं। चमत्कार को ही तो नमस्कार होता है, तब अवश्य ही श्रीकृष्ण में कोई अद्भुत चमत्कार होगा जिसके कारण से लोग केवल हाथों से नहीं बल्कि अष्टांग (आठों अंगों से) नमस्कार करते हैं। महात्मा, जिनके आगे लोग माथा झुकाते हैं, राजा, जिनको प्रजा 'अन्नदाता' कह कर बुलाती है, ब-अदब, ब-मुलाहिजा, होशियार होकर जिनके आगे खूब झुकती है, वे भी श्रीकृष्ण के आगे माथा टेकते हैं। यदि वे श्रीकृष्ण के मन्दिर के मार्ग से जा रहे हों, तो बाहर की दहलीज को भी हाथ अथवा माथे से छू देते हैं, तब श्रीकृष्ण में इतनी महानता होगी न?

जन्म से ही सम्पूर्ण निर्विकारी

आपने देखा होगा कि जहाँ श्रीकृष्ण की मूर्ति स्थापित की होती है, उसके चारों ओर ऐसा घेरा बना होता है कि जिसके कारण भक्त लोग अन्दर नहीं जा सकते और मूर्ति को नहीं छू सकते। मन्त्रों द्वारा देव का आह्वान करने के बाद वे मन्दिर की मूर्तियों को क्यों नहीं छू सकते? कारण यह है कि श्रीकृष्ण अत्यंत पवित्र थे जबकि आज मनुष्य काम, क्रोध के कारण पतित है। 'संन्यासी' और 'महात्मा' लोग तो साधना अथवा पुरुषार्थ करते हैं, तभी उन्हें पवित्रता प्राप्त होती है, वे जन्म से ही महात्मा या संन्यासी नहीं होते। अत: जब वे 'महात्मा' बनते हैं तभी उनके चित्रों में, उनके सिर के पीछे प्रकाश का ताज (प्रभामण्डल) अंकित किया जाता है परन्तु श्रीकृष्ण को तो शिशुकाल से ही रत्न-मुकुट तथा 'प्रकाश का ताज' प्राप्त था। वे तो जन्म से ही सम्पूर्ण निर्विकारी थे।

श्रीकृष्ण का पूर्व जन्म में अत्यंत महान पुरुषार्थ

जन्म से ही पवित्रता का तथा रत्न-जड़ित ताज प्राप्त होने से सिद्ध है कि श्रीकृष्ण ने पूर्व जन्म में कोई बहुत ही महान पुरुषार्थ किया होगा जिसके फलस्वरूप उन्हें स्वस्थ एवं सर्वांग सुन्दर तन, अति निर्मल मन (संस्कार), अतुल धन और अनुपमेय सम्मान प्राप्त हुआ। तन, धन, प्रकाश का ताज – ये भी तो कर्म और संस्कार अथवा 'पुरुषार्थानुसार' ही प्राप्त होते हैं। कहावत भी है कि 'पुरुषार्थ द्वारा नर, श्री नारायण और नारी, श्री लक्ष्मी के समान बन सकती है।' तो स्पष्ट है कि श्रीकृष्ण, जिनका एक नाम 'श्री नारायण' भी है, पूर्व जन्म में नर होंगे और उन्होंने ऐसा उत्तम पुरुषार्थ किया होगा कि अगला जन्म उन्हें श्री नारायण अर्थात् श्रीकृष्ण रूप में प्राप्त हुआ। उन्होंने पूर्व जन्म में विकारों का सम्पूर्ण संन्यास किया होगा तभी वे इस जन्म में बचपन से ही निर्विकारी कहलाये। उन्होंने ईश्वरीय ज्ञान और सहज योग के अभ्यास द्वारा आत्मा के प्रकाश की कलाओं को बढ़ाया होगा, तभी तो वे '16 कला सम्पूर्ण देवता' कहलाये। घर-गृहस्थ में रहते हुए उन्होंने विकारों पर विजय प्राप्त की होगी तभी तो आज 'बोल श्री कृष्ण महाराज की जय' इस प्रकार लोग उनका

जयघोष करते हैं।

भगवान हैं देवों के भी देव

श्रद्धालु मनुष्य का स्वभाव है कि वह जिसमें भी अधिक गुण देखता है अथवा कुछ न्यारापन देखता है, उसे भावना-वश, भगवान कहने लगता है। ठीक यही बात श्रीकृष्ण के बारे में भी घटित होती है। श्रीकृष्ण भी न्यारे तो थे परन्तु उनका न्यारापन कमल पुष्प के समान था। वे संसार में रहते हुए पवित्र थे और उसमें आसक्त नहीं थे। इस अर्थ में वे महान और न्यारे थे परन्तु भगवान का न्यारापन इससे भिन्न तरह का है। भगवान तो जन्म-मरण से ही न्यारे हैं, सुख-दुख से भी न्यारे हैं। श्रीकृष्ण ने जन्म तो लिया ही था और सुख भी भोगा ही था। अत: उन्हें शिरोमणि 'देवता' कहेंगे परन्तु 'भगवान' नहीं कहेंगे क्योंकि भगवान तो 'देवों के भी देव' हैं।

अत: श्रीकृष्ण तो वास्तव में भगवान की सर्वोत्तम रचना है। जैसे बालक को देख कर पिता की याद आती है, किसी सुन्दर कृति को देखकर उसके कर्त्ता की याद आती है, वैसे ही श्रीकृष्ण का चित्र देखकर उसके रचयिता स्वयं भगवान (शिव) की याद आनी चाहिए। जन्माष्टमी के पावन पर्व पर हम भी श्रीकृष्ण जैसे दिव्यगुण अपने में भरने का दृढ़ संकल्प करें, यही इस पर्व की सार्थकता है। ❖

दृढ़ संकल्प बनाता है विजयी

ब्रह्माकुमारी सीता, मुलुंड (मुंबई)

तारीख 24.04.2016 को मुम्बई के अत्रे मैदान पर, महाराष्ट्र के पानी के अभाव को दूर करने और जल तत्व को शुभ संकल्प देकर बरसने के लिए खास योग भट्ठी 'मुंबई मेडिटेटिंग' के नाम से रखी गई थी। समय था सवेरे 6 से 8 बजे। मुंबई के सभी सेवाकेन्द्रों को इसमें शामिल होना था तथा सभी टीचर बहनों को स्टेज पर बैठकर योग करवाने के लिए सवेरे 5.45 बजे तक पहुँचना था।

मुझ आत्मा को विशेष उमंग-उत्साह था कि मुझे इस योग कार्यक्रम में अवश्य समय पर पहुँचना ही है। हम प्रात: 5.15 पर कार से निकले ताकि समय पर पहुँच सकें। मध्यम गति से चलती हुई कार जब हाई वे (द्रुत गति मार्ग) पर पहुँच गई तब उसका पिछला टायर पंक्चर हो गया। गाड़ी थोड़ी टेढ़ी होकर रुक गई, पीछे से एक ट्रक स्पीड से आ रहा था, जैसे ही कार रुकी, ट्रक वाले ने पीछे से टक्कर मार दी। मुझे अनुभव हुआ जैसे मेरे सिर पर पहाड़ गिर गया हो। तुरंत बाबा को याद किया और ड्राइवर भाई से पूछा, क्या हो गया? लोग जमा हो गये, उन्होंने कहा, बहन जी, आप बाहर आइये। मेरे माथे से खून बह रहा था। इतने में ही बाबा की दूसरी गाड़ी आ गई, उसमें कई ब्र.कु.भाई-बहनें थे। उन्होंने कहा, बहन जी, हम आपको डॉक्टर के पास ले चलेंगे लेकिन मेरे संकल्प में इतनी दृढ़ता थी कि मुझे योग कार्यक्रम में पहुँचने के सिवाय और कुछ याद नहीं आ रहा था। संयोगवश रक्त बहना भी बंद हो गया। मैं उन्हीं ब्र.कु.भाई-बहनों के साथ, उनकी गाड़ी में चली, निर्धारित समय पर पहुँची और योग भी किया।

यह अनुभव इसलिए लिख रही हूँ क्योंकि जब मैं कार से बाहर आयी, गाड़ी की अवस्था देखी, वह ऐसी थी कि उसमें बैठा हुआ कोई भी व्यक्ति जीवित रहे, यह नामुमकिन था। प्यारे बाबा ही अपने बच्चों को गोद में लेकर बचा सकते हैं। मुझे सिर्फ माथे में थोड़ी-सी चोट लगी थी, योग करके लौटने पर मैंने पट्टी करवा ली। दिल से कहना चाहती हूँ कि बाबा, आपके प्यार का क्या कहना! इस संगमयुग पर जीवन आपको दिया है, आप हमें संभाल रहे हो। हमारे संकल्प दृढ़ होने चाहिएँ। हमें आप अपनी पलकों पर बिठाकर ले चलते हो और सदैव हमारे साथ रहते हो। ❖

इतिहास के अनछुए पन्ने

ब्र.कु. उर्मिला, संयुक्त संपादिका

भगवान शिव त्रिकालदर्शी, त्रिलोकज्ञ तथा सर्वज्ञ हैं। सृष्टि के आदि, मध्य, अन्त के ज्ञाता और व्याख्याता हैं। वे इस सृष्टि पर प्राय: लुप्त सत्यज्ञान को प्रकट करते हैं। चूँकि वे कालातीत, कालजयी हैं, कालबद्ध नहीं हैं इसलिए वे ही एकमात्र सत्य के उद्‌गाता हैं।

इतिहास के बारे में मानव भी बहुत कुछ सीखता, जानता, वर्णन करता है परन्तु वह कालबद्ध है। जन्म और मृत्यु के बीच के थोड़े जीवन में वह बहुत थोड़ा जान पाता है। उसके लिए उसे प्राचीन पुस्तकों, अभिलेखों, यादगारों, अवशेषों आदि का सहारा लेना पड़ता है। एक ही अवशेष, अभिलेख आदि के सम्बन्ध में अलग-अलग व्यक्तियों की अलग-अलग व्याख्याएँ होती हैं। इसलिए इतिहास की कई बातें ऐसी हैं जिनके बारे में कई विद्वानों के मत एक दूसरे के सर्वथा भिन्न हैं।

इतिहास के प्रति पश्चिम की दृष्टि

पश्चिमी देशों के इतिहास-लेखक विकासवाद के सिद्धान्त को मानते हैं। वे कहते हैं कि संसार तरक्की कर रहा है। उनकी दृष्टि में विश्व में उत्तरोत्तर सभ्यता का विकास होता आया है। पाश्चात्य इतिहासकार यह भी मानते हैं कि आदि-काल में मनुष्य असभ्य और जंगली था और धीरे-धीरे उसका विकास हुआ। इसी सन्दर्भ में डार्विन के विकासवाद की चर्चा की जाती है कि मानव का विकास एककोशी जीव से बहुकोशी जीव के रूप में हुआ है और कि मानव के पूर्वज बन्दर थे।

इतिहास के प्रति पूर्व की दृष्टि

भारत की प्राचीन परम्परा और यहाँ का धार्मिक इतिहास ह्रासवाद को ही मान्यता देता है। भारतवासियों की यह मान्यता रही है कि संसार का उत्तरोत्तर ह्रास होता आया है। सतयुग में सभ्यता और सुख की पराकाष्ठा थी परन्तु धीरे-धीरे उसकी कलाओं का ह्रास हुआ। भारत में

यह भी मान्यता रही है कि सृष्टि रचने के समय परमात्मा ने परमगुरु के रूप में मनुष्य को ईश्वरीय ज्ञान दिया। भारतीय वेदों में 'अकृष्ट पच्या भूमि' का सिद्धान्त है। इसका भावार्थ है – ''सृष्टि के आदि में प्राकृतिक शक्तियाँ पूरे यौवन पर होती हैं। उस समय भूमि उत्कृष्ट पच्या होती है अर्थात् उसमें हल चलाने, खाद डालने या बीज वपन करने की आवश्यकता नहीं होती। सब प्रकार के वनस्पति और फल-फूल स्वयं उससे पैदा होते हैं।'' प्राचीन काल में मिश्र के लोग भी मानते थे कि 'एक स्वर्ण युग' ऐसा था जब मनुष्य भूतल के सब प्राणियों के साथ मित्रता-पूर्वक जीवन बिताता था और पृथ्वी के स्वयंभू फलों (Spontaneous fruit of Earth) से उदरपूर्ति करता था। सृष्टि के आदि में चूँकि भूमि अकृष्ट पच्या थी इसलिए आदि मानव निरामिष-भोजी (Vegetarians) थे।

शौर्य केवल इतिहास के पन्नों पर

पृथ्वी की आयु ज्यों-ज्यों बढ़ती जाती है त्यों-त्यों उसकी प्राकृतिक शक्तियों का ह्रास होता जाता है और क्रमश: वह स्थिति भी आ जाती है कि मिट्टी में बीज डालना आवश्यक होता है। वह स्थिति भी आ जाती है जब हल

चला कर धरती की उर्वरा शक्ति को ऊपर लेना आवश्यक प्रतीत होने लगता है। इसी प्रकार, भूमि की शक्ति का ह्रास होते-होते यह नौबत आ जाती है कि उसमें खाद डालना भी आवश्यक हो जाता है। ह्रासवाद का यह सिद्धान्त जातियों और राष्ट्रों पर भी लागू होता है। प्राचीन काल की वे सब जातियाँ जो कभी अपने शौर्य, पराक्रम और विद्वता के लिए विख्यात थीं, उनके गत वैभव का चिह्न इतिहास के पन्नों के सिवा कहीं नहीं रहा। मानव के पूर्वज देवता थे इसलिए हम अपने घरों में श्रीकृष्ण, श्री नारायण, श्री सीता, श्री लक्ष्मी, श्री दुर्गा आदि पूर्वजों के चित्र लगाते हैं। आज उनकी सुकर्म गाथा चित्रों, पुस्तकों और कथाओं में सिमटकर रह गई है।

आदिकाल में मानव के असभ्य होने की मान्यता क्यों बनी?

प्रश्न उठता है कि मानव प्रारम्भ काल में जंगली था, असभ्य था यह मान्यता बनी क्यों? वास्तव में दैवी सभ्यता के जाने के बाद जब मानवीय सभ्यता का आगमन होता है तो उस संगम के समय का थोड़ा-सा काल जंगली और असभ्य काल ऐसा होता है जिसमें मानवीय सभ्यता पूर्ण विकास को नहीं पाई होती। उस छोटे से काल को इतिहासकारों ने असभ्य और जंगली करार दे दिया है। इससे पहले की दैवी सभ्यता का वर्णन वे अपनी लेखनी से नहीं कर पाए जो कि संसार की सर्वोच्च सभ्यता थी। उसी के लिए कहा गया है कि सोने की द्वारिका पानी में चली गई। आज भी प्राकृतिक आपदा में सबकुछ नष्ट होने पर मानव को तम्बुओं में रहना पड़ता है और पत्तलों पर खाना पड़ता है। फिर नए भवनों का निर्माण होने पर पुनः सभ्य जीवन बिताने लगता है। वह भी ऐसा ही अल्पकाल का दृश्य था। उसके बाद भारत में एक ताज वाले राजाओं की सभ्यता खूब फलती-फूलती है।

कोई भी वस्तु आरम्भ में नई फिर पुरानी होती है

नियम यह कहता है कि कोई भी चीज इसके निर्माण के समय अपनी सर्वोच्च अवस्था में होती है, फिर धीरे-धीरे वह विकृत होती है, उसकी कलाएँ घटती हैं। जब भवन बनता है तब वह बहुत सुन्दर होता है। बाद में क्रमशः रजो, तमो होता जाता है। बर्तन, कपड़ा, गाड़ी या अन्य कोई भी वस्तु निर्माण के समय अपनी सतो अवस्था में होते हैं। बाद में प्रयोग में आते-आते पुराने होकर टूटते-फूटते हैं, यह प्रकृति का नियम है। जो बात प्रकृति की एक वस्तु के लिए सत्य है वह अन्य सभी वस्तुओं के लिए भी सत्य है अर्थात् पूरी प्रकृति के लिए भी सत्य है। परमात्मा ने पुरानी सृष्टि रची, फिर वह धीरे-धीरे नई हुई, ऐसा नहीं है। परमात्मा ने नई सृष्टि रची फिर वह धीरे-धीरे पुरानी हुई, यह सत्य है। बाइबल में लिखा है कि क्राइस्ट से 3 हजार साल पूर्व धरती पर पैराडाइज (स्वर्ग) था। स्वर्ग अर्थात् सतोप्रधान सृष्टि जो बाद में क्रमशः रजो, तमो की ओर अग्रसर होती गई।

भारत है अविनाशी खण्ड

भगवान शिव कहते हैं, भारत अविनाशी खण्ड है इसका कभी विनाश नहीं होता। भगवान का अवतरण भी इसी भूमि पर होता है। यह शिव-भूमि भी है तो देव-भूमि भी है। जब तक 33 करोड़ देवी-देवताओं का सृष्टि पर राज्य होता है (सृष्टि का पहला आधा भाग, ब्रह्मा का दिन, 2500 वर्ष) तब सारा विश्व ही भारत कहलाता है। देवी-देवताओं का पार्ट पूरा होने पर धर्मपिताओं का पार्ट चलता है और तब इस सृष्टि में अनेक धर्म, देश, जातियाँ, वर्ग आदि के आधार पर अनेक मतें हो जाती हैं। इन विभिन्न मतों के कारण सत्य जब प्रायलोप हो जाता है तब परमात्मा पिता भारत भूमि पर अवतरित होकर सत्य इतिहास-भूगोल की जानकारी देते हैं जिससे एक धर्म, एक राज्य, एक कुल, एक भाषा के आधार पर एकता का युग सतयुग पुनः स्थापित होता है। इस प्रकार एकता से अनेकता और अनेकता से एकता की ओर यह सृष्टि-चक्र अनवरत घूमता है। परमात्मा का कार्य अनेकता को समाप्त कर एकता को स्थापन करना है जो कि वर्तमान समय प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के माध्यम से चल रहा है। ❖

रूहानी सर्जन की रूहानी जादूगरी – दुर्घटना बनी इलाज

❍ ब्रह्माकुमार हीरालाल, रीवा (म.प्र.)

मेरी उम्र अभी 23 वर्ष है। करीब 11 वर्ष पूर्व कुएँ में गिर गया था, लौकिक बाबा ने कुएँ में कूदकर मेरी जान बचा ली लेकिन सीने में लगी चोट के कारण काफी दर्द रहने लगा था। एक बार कबड्डी के खेल में चोट वाले स्थान पर बड़ी ईंट गिर गई। डॉ.को दिखाया, एक्स-रे करवाया, डॉ. ने कहा कि दवाई लेते रहने से ठीक होगा परन्तु दर्द होता ही रहता था और मैं दवाई आदि लेता रहता था। सन् 2002 में सड़क दुर्घटना के कारण पुनः हॉस्पिटल जाना पड़ा, एक्स-रे हुआ, बताया गया कि रीढ़ की हड्डी की दो गोटियाँ दब गई हैं, ऑपरेशन करना होगा। इसके बाद घर आकर दवाइयों से काम चलाता रहा लेकिन दर्द होता ही रहता था।

सेवा के लिए कभी 'ना' नहीं कहा

सन् 2014 में, 14 अगस्त को मैं प्यारे बाबा के घर (रीवा, ब्रह्माकुमारी आश्रम) आया और ईश्वरीय सेवायें करने लगा। आश्रम में रहते मैंने निमित्त बहन जी तथा आश्रमवासियों को सीने की चोट या रीढ़ की हड्डी के दर्द के विषय में कुछ भी नहीं बताया। एक बार अधिक श्रम के कारण मेरे सीने में, पीठ में भयंकर दर्द होने लगा और मैं छटपटाने लगा। मेडिकल कॉलेज के वरिष्ठ डॉक्टर से जाँच करवाई तो उन्होंने कहा, इसका दर्द जटिल है, ऑपरेशन कराना ही पड़ेगा। जबलपुर के बड़े डॉक्टर की देखरेख में एक्स-रे, सिटी स्कैन करवाया तो उन्होंने कहा कि ढाई-तीन लाख रुपयों में ऑपरेशन होगा। मेरे पास पैसे का इंतजाम तो था नहीं इसलिए सब कुछ भगवान के भरोसे छोड़ दिया और पुनः दवाइयों के सहारे सेवा करता रहा। किसी भी सेवा में कभी भी ना नहीं की, यह मेरा नियम था।

गोटियाँ हो गई अपने स्थान पर सेट

एक रात्रि 9 बजे, दो सौ ज्ञानामृत पत्रिकाओं का बन्डल 3 किलोमीटर दूर, स्कूटर से पहुँचा कर लौटते समय दुर्घटनाग्रस्त हो गया। जहाँ पर गिरा था वहीं से मोबाइल द्वारा रोते हुए फोन किया कि मैं गिर पड़ा हूँ। इसके बाद मुझे अस्पताल ले गए, तीन दिन भर्ती रहा। एक्स-रे किया गया, बड़े डॉक्टर जिन्होंने रीढ़ की हड्डी की दो गोटियाँ (गोटी) दबी होने के कारण पहले भी मुझे ऑपरेशन कराने की सलाह दी थी, के आश्चर्य का ठिकाना न रहा कि सिटी स्कैन व एक्स-रे आदि सभी में ओ.के.रिपोर्ट आ रही थी। अन्त में डॉक्टर ने कहा कि भैया आपके ऊपर दैवी चमत्कार हो गया है। आपकी सब बीमारियाँ ठीक हो गई हैं। भगवान ने आपको अपने आप ओ. के. कर दिया है। आपकी सर्जरी परमात्मा ने कर दी है और रीढ़ की हड्डी की दोनों गोटियाँ अपने स्थान पर सेट हो गई हैं। आप बहुत ही तकदीरवान हैं।

इस घटना को 2 वर्ष पूर्ण हो रहे हैं। मैं सौ प्रतिशत फिट हो कर 16 से 20 घण्टे तक हर प्रकार का श्रम कर लेता हूँ। मेरे रूहानी सर्जन शिव बाबा ने मेरी रूहानी सर्जरी करके मुझे सौ प्रतिशत स्वस्थ और निरोगी बना दिया है। बाबा, आपका जितना शुक्रिया करूँ, कम ही है। ❖

वैश्विक प्रेम के प्रतीक **'रक्षाबंधन पर्व'** तथा सतयुगी दुनिया के महाराजकुमार श्रीकृष्ण के जन्मोत्सव **'जन्माष्टमी'** पर्व की पाठकगण को कोटि-कोटि बधाइयाँ

कर्मों की गुह्यगति – मेरा अनुभव

ब्रह्माकुमार रमेश शाह, मुंबई (गामदेवी)

ज़िंदगी में कई बार उतार-चढ़ाव आते हैं। इस उतार-चढ़ाव का कारण क्या है, वह समझना पड़ेगा। कई बार ये उतार-चढ़ाव हमारे पिछले जन्मों के कर्मों पर आधारित होते हैं परंतु कई बार ये वर्तमान परिस्थिति पर आधारित होते हैं।

26 अप्रैल, 2016 के दिन सुबह 3 बजे मैं उठा और अमृतवेले के गीतों को सेट करने के लिए मोबाइल हाथ में लिया परंतु देखा कि मोबाइल की बैटरी डाउन थी इसलिए मोबाइल को चार्ज करने के लिए पिन लगा रहा था परंतु फिसल गया और गिर गया। बाद में मुझे बाबा के बी.एस.ई.एस. हॉस्पिटल (मुम्बई) में ले गये। एक्स-रे के बाद मालूम पड़ा कि मेरे पैर की हड्डी में तीन फ्रेक्चर हो गये हैं। मुझे याद आया, मैं सबको कहा करता था कि बड़ी उम्र में कभी भी गिरना नहीं चाहिए। मेरी लौकिक बड़ी बहन डॉ. अनिला बहन भी मुझे हमेशा कहती थी कि मैं लकड़ी या किसी व्यक्ति के सहारे ही चला करूँ। अक्सर मैं किसी का हाथ पकड़कर ही चलता हूँ परंतु उस दिन सुबह का समय था और एक ही मिनट का काम था इसलिए मैं अकेला गया और गिर गया। मेरे कई मित्रों एवं रिश्तेदारों के अनुभवों से मुझे पता था कि बड़ी उम्र में हड्डियाँ कमजोर होने से टूटने का डर रहता है और टूटने से बहुत मुश्किलें बढ़ती हैं। प्यारे बाबा की मदद एवं दैवी परिवार की शुभभावनाओं के सहयोग से मेरा ऑपरेशन सफल रहा। मैं बाबा के इस हॉस्पिटल में करीब 45 दिन तक रहा।

मैंने प्यारे बापदादा से पूछा था कि ऑपरेशन के बाद मैं कहाँ जाऊँ, मैंने तीन स्थान सोचे थे – 1) देवछाया- जहां पर मैं पिछले 55 वर्षों से रह रहा हूँ, 2) गामदेवी सेवाकेन्द्र और 3) मधुबन-प्यारे बाबा के घर में, तो प्यारे बाबा ने मुझे श्रीमत दी कि मैं मधुबन में ही रहूँ अत: हॉस्पिटल की यात्रा पूरी करके मैं सीधा ही मधुबन बाबा के घर 10 जून को पहुँच गया।

इस एक्सीडेंट के कारण एक बात का अनुभव हुआ कि शरीर की सम्भाल करना भी अति आवश्यक है। जैसे बाबा का एक स्लोगन है - यदि तुम परमात्मा का ध्यान करोगे तो वह तुम्हारा ध्यान रखेगा, ऐसे ही अगर आप शरीर का ध्यान रखोगे तो शरीर भी तुम्हें साथ देगा। मैंने 3 साल तक अष्टांग योग किया और 1961 तक कसरत की परंतु बाद में कसरत करना छोड़ दिया और इसके बाद कभी भी शरीर का ध्यान नहीं रखा अर्थात् शारीरिक कसरत आदि नहीं की इसलिए शरीर के स्नायु मजबूत नहीं बने रहे और परिणामरूप शांतिवन में भी अगर महादानी कॉटेज से दादी कॉटेज जाना होता था तो मैं गाड़ी का उपयोग करता था। इसीलिए इस लेख के द्वारा मैं आप सबको बताना चाहता हूँ कि सेवा का सर्वश्रेष्ठ साधन शरीर है परंतु शरीर और सेवा दोनों के बीच हमेशा ही बैलेन्स बना रहना चाहिए जो मैंने नहीं रखा और परिणामस्वरूप विचार में आया कि जैसे राजयोगा एज्यूकेशन एण्ड रिसर्च फाउण्डेशन के अन्तर्गत स्पोर्ट्स विंग है वैसे ही यहाँ आबू में भी सभी के लिए एक स्पोर्ट्स कॉम्प्लेक्स बनाया जाये जहाँ हर कोई खेलकूद, एक्सरसाइज आदि कर सके। इससे शरीर के साथ-साथ दिमाग को भी आराम मिलेगा।

मेरा अनुभव है, जब प्यारे ब्रह्मा बाबा मुम्बई आया करते थे तो संतरी दादी मुझे कहा करती थी कि सुबह-सुबह बाबा को पैदल कराने ले जाओ क्योंकि सारा दिन कारोबार में व्यस्त रहते हुए बाबा की शुगर बढ़ जाती थी। मधुबन में भी बाबा बैडमिंटन आदि खेलते थे। परंतु मैंने बाबा से यह कुछ भी सीखा नहीं। शरीर को अगर योग्य प्रकार से कसरत नहीं कराते तो शरीर के स्नायु जड़ हो जाते हैं और बाद में

कारोबार करना मुश्किल होता है।

14 जनवरी, 1963 के दिन मकर संक्रांति थी और मैं तब आबू में बाबा के पास आया था। मुरली के बीच में ही बाबा ने मुझसे पूछा कि बच्चे आज के दिन आप लोग क्या करते हैं? मैंने बाबा से कहा कि आज के दिन हम पतंग उड़ाते हैं। तो बाबा ने दादा विश्वरतन को बाजार भेजा और पतंग, धागा, चकरी आदि लाने के लिए कहा। फिर हमने बाबा के साथ हिस्ट्री हॉल की छत पर पतंग उड़ाई अर्थात् बाबा हमेशा ही खेलकूद आदि करते थे और इस प्रकार अपने शरीर का ध्यान रखते थे। कराची में क्लिफ्टन पर बाबा सभी बहनों एवं भाइयों को हाफ पैन्ट पहनाकर कसरत कराने के लिए ले जाते थे। मुम्बई में भी बाबा चौपाटी पर सैर करने जाते थे। आबू में भी मैंने बाबा के साथ बैडमिंटन, क्रिकेट जैसे आउटडोर गेम्स और चौपड़ आदि इनडोर गेम्स खेले हैं जिससे कि शरीर एवं ब्रेन दोनों की एक्सरसाइज होती थी। इसका अर्थ है कि बाबा आत्मा और शरीर दोनों की सेहत का ध्यान रखते थे तो क्यों नहीं हम भी अपने शरीर और आत्मा दोनों की सेहत का ध्यान रखें, बैलेन्स करें। रोज सुबह पैदल करना और बाद में खेलकूद के साधनों द्वारा खेलना, इस प्रकार रोज आधा घंटा शरीर के लिए अवश्य दें तो भी हमारा स्वास्थ्य अच्छा रहेगा।

आशा है कि मेरे इस अनुभव को हमारे दैवी परिवार के भाई-बहनें अवश्य ही ध्यान में रखेंगे और अपनी जीवनशैली में परिवर्तन करेंगे जिससे कि बाद में भी बहुत अच्छी रीति से सेवा कर सकेंगे।

26 अप्रैल, 2016 को तीन फुट की ऊँचाई से मेरा पैर टकरा गया और पैर की हड्डी के तीन टुकड़े हुए। कुछ दिन पहले गामदेवी सेवाकेन्द्र के सतीश भाई, उनकी युगल रेखा बहन तथा उनके दो मित्र ऑक्सफोर्ड से लन्दन आ रहे थे तब रास्ते में उनकी कार का एक्सीडेंट हुआ। कार तीन बार पलटी खाई, कार तो पूरी तरह से क्षतिग्रस्त हो गई परंतु कार में सवार सभी लोग सुरक्षित रहे। उनमें से किसी को भी चोट नहीं आई। हँसी में कहें तो कार 3 बार पलटी होने से ज्यादा नुकसानदायक हुआ 3 फुट से गिरना।

कई वर्ष पहले मद्रास में शांतिकुंज भवन का निर्माण हो रहा था। वहाँ पर अपने दैवी परिवार के एक इंजीनियर भाई 16 फुट की ऊँचाई से गिरे परंतु उन्हें कुछ भी नहीं हुआ और दो दिन बाद वहाँ के मुख्य इंजीनियर दुर्गाप्रसाद भाई 2-5 फुट की ऊँचाई से गिरे और उनके पैर में फ्रेक्चर हो गया। ऐसे बहुत से उदाहरण हैं जहाँ देखा गया है कि छोटी-छोटी बातों में ज्यादा नुकसान होता है और बड़ी बातों में नुकसान नहीं होता है। इन सब बातों को देखने से याद आता है — कर्मभोग। हमने पिछले या इस जन्म में जो कुछ विकर्म किये होते हैं उनकी सज़ा भुगतने के लिए ऐसे एक्सीडेन्ट आदि होते हैं। बाबा इस पर कहते हैं कि बच्चे, कर्मभोग रूपी बीमारी सबको सहन करनी पड़ती है इसलिए जितना हो सके, उतना याद की यात्रा पर रहो। योग की शक्ति द्वारा अपने कर्मभोग चुक्ता करो। साथ-साथ अपने किये हुए विकर्मों की बाबा से क्षमा मांगना भी जरूरी है। मैंने एक बार मातेश्वरी जी से पूछा था कि हमने इस जन्म के विकर्मों के लिए तो क्षमा मांगी और प्यारे बाबा ने आधा माफ भी किया परंतु पिछले जन्मों के विकर्मों के बारे में तो हम कुछ जानते ही नहीं हैं तो हम क्या करें? मातेश्वरी जी ने कहा कि जितना आप शुद्ध रहेंगे और वर्तमान के लिए बाबा से क्षमा मांगेंगे उतना वर्तमान व पिछले जन्म के लिए उपयोगी है और बाबा हमारे विकर्मों को क्षमा करेंगे।

क्रिश्चियन धर्म में भगवान से क्षमायाचना की मान्यता है। हरेक चर्च में कन्फेशन बॉक्स होता है और यह मान्यता है कि अगर आप धर्मगुरु/पोप/फादर के सामने कन्फेशन करते हैं तो प्रभु आपको माफ कर देते हैं। इस प्रकार अपने विकर्मों को विनाश करना बहुत जरूरी है। जितना योग द्वारा एवं क्षमायाचना द्वारा अपने विकर्म विनाश करेंगे उतना कम सहन करना पड़ेगा और संगमयुग पर अपना समय हम सेवा में सफल कर सकेंगे क्योंकि ईश्वरीय सेवा का जो समय है वह कर्मबंधन चुक्ता करने में नहीं जाना चाहिए, नहीं तो हम सेवा द्वारा भाग्य बनाने से वंचित हो जाते हैं।

दूसरी बात है कि कर्मभोग के समय पर अर्थात् एक्सीडेन्ट के समय पर बाबा याद आता है या नहीं? बाबा याद आता है तो बाबा मदद करने के लिए भी जिम्मेवार है, ऐसा मेरा अनुभव है। एक बार हम दिल्ली में कहीं जा रहे थे। हमारा एक भाई हाथ लंबा करके निकल रहा था कि अचानक बिजली के खंभे से टकराकर गिर गया और उसे गहरी चोटें आई। थोड़े दिन बाद एक दूसरा भाई भी इसी तरह खंभे से टकराकर गिरा तो उसे मामूली-सी ही चोट आई। मैंने अव्यक्त बापदादा से पूछा कि एक को कम चोट और दूसरे को ज्यादा चोट क्यों? इतना ज्यादा फर्क क्यों? बाबा ने कहा कि आप बच्चे यह सब नहीं समझेंगे। ये तो केवल त्रिकालदर्शी बाबा ही जानते हैं। जब दूसरा बच्चा खंभे से टकराया तो उसके मुख से निकला, ओ बाबा! तो बाबा का फर्ज बनता है कि बाबा बच्चों की मदद करें। इस प्रकार हमारा बुद्धियोग सदा बाप के साथ रहेगा तो हमें समय पर बाबा की मदद मिलेगी और हमारा कर्मभोग सूली से कांटा बन जायेगा। इस प्रकार कई बातें ध्यान में रहें तो कर्मभोग पर कर्मयोग की जीत होगी अर्थात् कर्मभोग के समय भी ईश्वरीय सेवा कर सकेंगे। इसलिए कर्मभोग की बात जानना, समझना और उस आधार पर शरीर की सम्भाल करते हुए सेवा करना बहुत-बहुत जरूरी है। जो जितना ज्यादा कर्मभोग को कर्मयोग में परिवर्तन करेंगे उतना ही आत्मा को कष्टों का कम अनुभव होगा।

इस बीमारी के समय और भी कई अनुभव हुए परंतु उन सबके बारे में लिखने का समय नहीं है। इसलिए इन दो विशेष बातों पर ध्यान दिलाकर लिख रहा हूँ कि सबको कसरत, एक्सरसाइज आदि करके शरीर को ठीक भी रखना है और जब कर्मभोग आता है तो उस समय बाबा की याद में रहकर उसे चुक्ता भी करना है इससे कर्मभोग की भोगना भी कम होगी और सेवा भी होती रहेगी। ❖

भावभरी श्रद्धांजलि

ब्रह्माकुमारी रश्मि अग्रवाल, गुमला (झारखंड)

प्रकाश ज्ञान का, मणि-सी दीप्ति, स्नेह की प्रतिमूर्ति।
बन ज्ञानस्वरूपा, पूज्या बनी, बनी महान विभूति।।
आपके कुशल प्रशासन ने दादी कर दिया कमाल।
नारी शक्तिस्वरूपा की आप बनी मिसाल।।

पाँचों द्वीपों में फैलाया अध्यात्म का प्रकाश।
दादी आपने छू लिया महानता का आकाश।।
हो गया अब तो मिशन का, व्योम-सा विस्तार।
विश्व के हर छोर को छूता अपना बेहद परिवार।।

कुमारों से था दादी आपको, बेइंतहा अनुराग।
सीखा सबने आपसे, भातृत्व भाव का राग।।
उमंग-उत्साह का अविरत झरना बहता था निशि-वासर।
सर्व थकान मिट जाती थी, सम्मुख आपको पाकर।।

न्यारा-न्यारा सुकूनदायक आपका जीवन-संगीत।
मधुरता का सुर था जिसमें साज बनी प्रभु-प्रीत।।
लुटा रही हो सब पर अब भी स्नेह-प्यार की अंजलि।
आपके जीवन और जज्बे को भाव भरी श्रद्धांजलि।।

आओ, अब तो आ जाओ, कहता मधुबन का आँगन।
आगमन से आपके फिर बरसेगा सुख का सावन।।
नहीं बिसारी हमने कब भी बाल सुलभ मुस्कान।
एक बार फिर आन मिलो, हो प्रकाशित जहान।।

पारसमणि थीं दादी

ब्रह्माकुमारी श्वेता, शान्तिवन

परमपिता शिवबाबा नव-सृष्टि निर्माण का भगीरथ कार्य जब प्रजापिता ब्रह्मा बाबा के तन द्वारा प्रारम्भ करते हैं तो माताओं-बहनों की अहिंसक शिव-शक्ति सेना का गठन करते हैं। इस सेना की सर्वप्रथम सेनानी, कमांडर-इन-चीफ के रूप में मातेश्वरी जगदम्बा सरस्वती का नाम आता है तो उनके बाद मन में प्रकाश की तरह कौंध जाता है एक नाम- दादी प्रकाशमणि। कैसा दिव्य आभामण्डल था दादी जी का, कैसी सौम्य मुखाकृति थी! क्या अद्‌भुत मेधा थी उनमें, क्या गजब की ऊर्जा थी! उमंग-उत्साह से आपूरित उनके अंग-अंग में बाबा और सेवा ही समाये थे! जब भी मुझे प्यारी दादी की याद आती है तो प्रेम और खुशी से भरपूर उनकी मूरत मेरे रोम-रोम को आह्लादित कर देती है। ऐसा लगने लगता है कि जैसे उनके मुसकराते चेहरे से पुलकित प्रकम्पन निकल-निकल कर चारों ओर के वातावरण को खुशनुमा बना रहे हों। ब्रह्मा बाबा के अव्यक्त होने के बाद 38 वर्षों तक दादी जी मुख्य प्रशासिका रहीं। उन्होंने इस ईश्वरीय यज्ञ का कर्मठता और कुशलता से संचालन किया। इसे प्रगतिशीलता के वो पंख लगाये जो आज इसके उत्कर्ष की ऊँचाई सभी को विस्मित कर देती है।

हैड (head) नहीं, अहैड (ahead) रही

दादी जी हैड कैसे बनीं? मैं समझती हूँ, अहैड (आगे) होने के कारण। एक दो बातों में नहीं, सर्व बातों में वे आगे थीं। उनके जीवन का हर पहलू दर्शनीय और वंदनीय था। शायद ही कोई ऐसा गुण हो जो उनमें न हो। इसलिए सबने दिल से स्वीकार किया कि ये हमारी दादी हैं, हमारी माँ हैं, हमारी मार्गदर्शक हैं, प्रेरक हैं। उनके शिष्टाचार, उनकी विनम्रता, निर्मलता और निष्पक्षता के आगे सब नतमस्तक हो जाते थे।

साहस से सफल नेतृत्व

दादी जी बहुत साहसी थीं। वे स्वयं भी ब्रह्मा बाबा के सामने से ही नई-नई सेवायोजना की जिम्मेवारी के लिए सर्वप्रथम हिम्मत का हाथ खड़ा करती थीं। इसी प्रकार का साहस वे अन्य आत्माओं में भरकर उन्हें भी जिम्मेवारी उठाने के लिए तैयार कर देती थीं। ब्रह्माकुमारीज़ के मुख्यालय मधुबन में भवन-निर्माण के, सेवाकेन्द्रों के विस्तार एवं वृद्धि के और विश्व स्तरीय सेवाओं के बड़े-बड़े प्रोजेक्ट्स का निर्विघ्न सहज सम्पन्न होना उनके इसी साहस का प्रतिफल था। इस साहस के गुण के लिए कहा गया है कि

गर हौसले बुलंद, इरादे अटल तो,
तूफाँ भी कश्ती को किनारे तक पहुँचा देते हैं।

सर्व में विश्वास-सर्व का विकास

दादी जी का हरेक आत्मा में अटूट निश्चय था और उसे आगे बढ़ाने की अपूर्व भावना थी। कार्य सौंपकर शायद ही वे किसी के लिए ऐसा सोचती हों कि पता नहीं, यह आत्मा इस कार्य को जिम्मेवारी और समझदारी से कर भी पाएगी या नहीं? उन्हें सदैव यह समर्थ स्मृति रहती थी कि कार्य शिवबाबा का है और वे ही इसे कराने वाले करनकरावनहार हैं, सामने वाली आत्मा तो निमित्त मात्र है, बाप का कार्य तो हुआ ही पड़ा है। दादी जी का ऐसा अटल विश्वास सामने वाली आत्मा में भी अभूतपूर्व हिम्मत, उमंग और समर्पणमयता का संचार कर देता था और सचमुच कार्य इतना शानदार होता था कि बरबस ही मुख से निकल पड़ता था– दादी जी, ये तो आपके विश्वास की कमाल है!

अनुकर्त्ता एवं अनुकरणीय

दादी जी में फॉलो फादर करने की अद्‌भुत विशेषता थीं। ब्रह्मा बाबा के अव्यक्त होने के बाद उन्होंने ईश्वरीय यज्ञ को उन्हीं नियम और मर्यादाओं पर चलाया, उनमें कोई ढील नहीं आने दी। जितनी गहराई से उन्होंने स्वयं इन्हें स्वीकार किया था, उतनी ही शिद्दत से सभी को स्वीकार कराया। किसी पर कुछ भी उन्होंने थोपा हो, ऐसा नहीं लेकिन स्नेह की शक्ति ने यह जादू किया जो नये आने वालों ने, विदेशियों ने भी इन मर्यादाओं को बहुत प्यार किया, दिल से सराहा और सहज रीति इन पर चलते रहे। जब इस प्रकार पीछे आने वाले कदम पर कदम रख कर चलते हैं तो लाइन सीधी रहती है, किसी के भटकने की या ध्यानभंग होने की गुंजाइश खत्म हो जाती है।

एक ही मीत, एक से प्रीत

दादी जी कहा करती थीं कि एक शिवबाबा को ही अपना दिलबर बनाना है, उनको ही दिल की बात सुनानी है। उनके सिवाय न कोई मेरे दिल का मीत, न किस से दिल की प्रीत। वो एक ही हमारा है और हम एक उसके हैं। दादी जी ईश्वर के प्रति पवित्र और उत्कृष्ट प्रेम का एक अनुपम उदाहरण थीं। उनके नयनों में, सूरत में, चाल-चलन में एक बाबा ही नजर आता था। वे हरेक आत्मा को बाबा के बच्चे के रूप में देखती थी और ईश्वरीय नाते से अपना अनमोल प्रेम लुटाती थीं। वे कहा करती थी कि अगर ईश्वर आपके पास है तो आपके पास क्या नहीं है और आप क्या नहीं कर सकते हैं।

दाती थीं दादी

दादी जी में देने की उत्कट भावना थी। छोटे-बड़े सभी का वे ख्याल रखती थीं, उनकी जरूरतों के बारे में पूछती थीं, सबको परिवार की भासना देती थीं। वे चाहती थी, हर आत्मा सदा संतुष्ट और खुश रहे। किसी की भूलों को उन्होंने कभी दिल पर नहीं रखा, कभी भूल कर दुबारा उनका वर्णन नहीं किया। वे सदैव सुख और प्यार का शीतल झरना बनकर रही जिसने अनेकों के चित्त की अग्नि को शांत किया। दादी सिर्फ ब्रह्माकुमार-कुमारियों की नहीं थीं, वे सारे विश्व की दादी माँ थीं। उन्होंने ईश्वरीय प्रेम और प्रकाश से स्वयं को परिपूर्ण कर उसे विश्व की लाखों-करोड़ों आत्माओं तक पहुँचाया।

25 अगस्त, 2007 के दिन इस भौतिक देह में अपनी यादगार यात्रा को दादीजी ने पूर्ण किया और ईश्वरीय कार्य को आगे बढ़ाने हेतु अग्रिम सेवा के लिए वे अन्य देह में अन्यत्र चली गईं। अपने प्रेरक रूहानी व्यक्तित्व और कृतित्व द्वारा दादी जी आज भी हमारे बीच मौजूद हैं, आज भी अपनी प्रकाशित आभा द्वारा हमारा मार्गप्रदर्शन कर रही हैं। एक आदर्श आध्यात्मिक नेता के रूप में वे सदा स्मरण आती रहेंगी।

गुणमूर्त गुलाब थीं दादी
शक्ति का सैलाब थीं दादी
खुशनुमा ख्वाब थीं दादी
लीडर लाजवाब थीं दादी

❖

चिन्ता, समस्या, पीड़ा हर ली बाबा ने

❍ ब्रह्माकुमार रतनलाल जांगिड़, केन्द्रीय कारागृह, अजमेर (राज.)

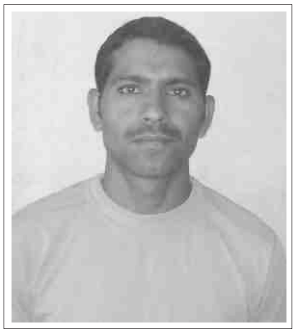

मेरा जन्म एक गरीब किसान परिवार में हुआ। गरीबी के कारण मैं ज्यादा पढ़ भी नहीं पाया। जब पढ़ रहा था तभी गलत दोस्तों से संग हो गया और बीड़ी, सिगरेट, गुटखा, तम्बाकू आदि नशों का सेवन करने लगा। नशों का इतना आदी हो गया कि इनके बिना रह नहीं सकता था। बचपन से ही क्रोधी स्वभाव था। गरीबी को लेकर बहुत दुखी रहने लगा। पढ़ाई छोड़ने के बाद फर्नीचर का कार्य करने लगा ताकि परिवार का खर्चा चला सकूँ लेकिन खराब आदतों के कारण यह भी नहीं कर पाया। इस तरह समय को गंवाता गया, मिला कुछ भी नहीं।

रोजाना भगवान को कहता था, भगवान जी, किस पाप का दंड दे रहे हो? संसार में एक से एक नीच और पापी भरे पड़े हैं। उन्हें तो न समाज, न सरकार और न आप कोई दंड देते हो, उन्हें सुख-सुविधाएँ दे रखी हैं, मुझे ही क्यों दुख, अपमान, पीड़ा झेलनी पड़ रही है? क्या इसलिए कि मेरे मन में ईश्वर के प्रति आस्था है, भक्ति है? क्या यह तेरा न्याय है भगवान? इस प्रकार देवी-देवताओं के आगे जाकर गिड़गिड़ाता रहता था। मैं हनुमान जी का भक्त था, रोज सुन्दर-कांड का पाठ किया करता था परन्तु ऊपर उठने की बजाय नीचे ही गिरता गया।

समय बीतता गया और एक लड़की से प्रेम करने लगा। तीन साल तक प्रेम चलता रहा। 30 सितम्बर, 2012 को हम घर से भाग गये और मन्दिर में शादी कर ली। लड़की के परिवार वालों ने कोर्ट में मुकदमा लगा दिया और 25 दिसम्बर, 2012 को मैं अजमेर केन्द्रीय जेल में आ गया। जेल में मेरी स्थिति और भी खराब होने लगी। मैं तनाव में रहने लगा, तनाव के कारण पागल होने की स्थिति आ गई। मुझे चारों तरफ अशान्ति ही अशान्ति नजर आने लगी। इतना दुखी हो गया कि अब मौत को गले लगा लूँ।

जनवरी, 2013 में अजमेर जेल में ओमशान्ति वालों का कार्यक्रम हुआ, मैं भी शामिल हुआ। वहाँ ब्रह्माकुमारी बहन तथा भाइयों ने आत्मा और परमात्मा का ज्ञान समझाया। बहन जी ने पहला पाठ पढ़ाते हुए कहा कि आप इस शरीर को चलाने वाली दिव्य प्रकाश स्वरूप चैतन्य आत्मा हो, शरीर सत्य नहीं, सत्य तो आत्मा है। इस मिट्टी के शरीर के लिए आज तक तुमने क्या-क्या नहीं किया। फिर दस मिनट योग कराया। योग से मुझे ऐसी शान्ति का अनुभव हुआ जो जीवन में पहले कभी भी नहीं हुआ था। मुझे यह कार्यक्रम बहुत ही अच्छा लगा।

मैं मन ही मन सोच रहा था कि परमात्मा मुझसे मिलने जेल में आ गये। फिर हम सभी बन्दी भाइयों को सप्ताह कोर्स की छोटी किताब दी गई। बाबा की ऐसी कृपा हुई कि फरवरी, 2013 से जेल में भी क्लास (मुरली) चलनी शुरू हो गई। शुरू-शुरू में हम 70 बन्दी बाबा के बच्चे बने। मुरली क्लास कराने के लिए ब्र.कु.ओमप्रकाश भाई और ब्र.कु.प्रेम भाई आते थे। मैंने लगातार बाबा की मुरली सुनना शुरू किया, राजयोग का अभ्यास करने लगा। बाबा ने मुझे पागल होने से बचा लिया। मुझे सच्चा पिता मिल गया, सच्चा रास्ता मिल गया। आज मेरे चारों तरफ शान्ति ही शान्ति है। क्रोध भी समाप्त हो गया है, सारे नशों से मुक्त हो गया हूँ। अब तो सिर्फ बाबा का ही नशा चढ़ा रहता है। अब परिवार वाले मुलाकात करने आते हैं तो मेरा परिवर्तन देख बहुत खुश होते हैं। बाबा का ज्ञान समझने के बाद सारी चिन्ता, समस्या, पीड़ा बाबा को दे दी है और प्यारे बाबा ने हर ली है। मैं सभी बन्धनों से मुक्त होता जा रहा हूँ। ❖

भाग्य का बीज है संकल्प

ब्रह्माकुमार रमन, उरलाना कलां (हरियाणा)

जब हमारे मन में किसी कर्म के लिए संकल्प आता है तो मन उसी समय उस कर्म को शुरूआती आकृति देना शुरू कर देता है। मन में बहुत-से संकल्प आते हैं, जो सकारात्मक, नकारात्मक या व्यर्थ होते हैं। कार्य व्यवहार में रहते हुए मन में एक मिनट में लगभग 20 विचार उत्पन्न होते हैं। इनमें से कुछ भूतकाल, कुछ भविष्य काल व शेष वर्तमान काल से सम्बन्धित होते हैं। कई बार कई कहते हैं, मैं अभी दुखी नहीं हूँ पर पिछली घटना को स्मरण कर दुखी हूँ, इस प्रकार दुखी होना भी गलत परिणामों को सामने लाएगा। मतलब साफ है कि हमें भूतकाल व भविष्य काल को भूल कर वर्तमान जीवन का पूरा-पूरा आनंद लेना चाहिए। यदि वर्तमान में भी किसी परिस्थिति का सामना करना पड़ रहा है तो उसे पूरी तरह समझ कर, शांति से बाहर निकलने का रास्ता खोजना चाहिए क्योंकि शांति ही एकमात्र ऐसी अवस्था है जिसमें कितनी भी बड़ी परिस्थिति का हल खोजा जा सकता है।

बात अन्दर थी तो जुबान पर आई

जब हम किसी भी कार्य के बारे में बार-बार सोचते हैं, चाहे यह सोचें कि यह करना है, चाहे यह सोचें कि यह नहीं करना है, तो अर्धजागृत मन, शरीर और बाह्य प्रकृति को उस कार्य के लिए तैयार करने लगता है। अब हमारे न चाहते हुए भी वह कार्य हो जायेगा। मान लीजिए, हम बार-बार किसी के बारे में गुस्से के विचार मन में लाते रहें तो जब उस व्यक्ति के साथ हमारी कोई बात होगी तो न चाहते हुए भी हम गुस्सा कर जाएँगे। कई बार हम बात कह कर फिर कहते हैं, मैं यह कहना नहीं चाहता था, पता नहीं कैसे जुबान पर आ गयी। बात अन्दर थी तो जुबान पर आई। यदि चित्त में न होती तो जुबान पर आ नहीं सकती थी।

सभी अपराधों की जड़ हैं पाँच विकार

कोई भी संकल्प चाहे गम्भीरता से, मजाक से या किसी परिस्थिति-वश उत्पन्न किये हों, सारे जीवन को प्रभावित करते हैं। विचार कीजिए, समाज में आज आपराधिक मामले इतने अधिक क्यों बढ़ते जा रहे हैं? कारण क्या है? उत्तर यही है कि रोज टी.वी. द्वारा देखे गए व समाचार-पत्रों से पढ़े गए जो विचार अन्दर जाते हैं उनका अनुसरण करते हुए ही हमारा मन नए विचारों की उत्पत्ति करता है। इनमें से अधिकतर विचार काम, क्रोध, लोभ, मोह या अहंकार से सम्बंधित होते हैं और ये 5 विकार ही सभी अपराधों की जड़ हैं। इसलिए सर्वप्रथम हमें अपने अन्दर जाने वाले विचारों का परिवर्तन करना होगा। तभी मन में उत्पन्न होने वाले विचार परिवर्तित होंगे। कई लोगों का कहना होता है कि हम तो टी.वी. में धार्मिक कार्यक्रम जैसे रामायण, महाभारत या शिवपुराण इत्यादि देखते हैं। कार्यक्रम धार्मिक हों या कोई भी हों उनमें यदि लड़ाई-झगड़ा या दूसरे विकारों को उभार कर दिखाया गया होगा तो कुप्रभाव अवश्य पड़ेगा। मानव मन सकारात्मकता से अधिक व जल्दी नकारात्मकता को ग्रहण करता है। इस कारण धार्मिक कार्यक्रमों में यदि जरा भी नकारात्मकता है तो मन तुरन्त ग्रहण कर लेता है जिसका घर-परिवार पर उल्टा असर पड़ता है।

मन को न बनाएँ कचरा-पात्र

हमारा एक-एक संकल्प पूरे विश्व पर प्रभाव डालता है। विचारों के द्वारा कर्म बनते हैं और कर्मों के द्वारा भाग्य। इसलिए विचारों या संकल्पों को ही भाग्य का बीज कहा जाता है। हम जैसे विचारों के बीज बोयेंगे वैसे ही कर्म रूपी वृक्ष बनेंगे और उसी आधार पर भाग्य रूपी फल निर्मित होंगे। कहा जाता है कि सोचने से भी पहले रुको और सोचो कि यह बात सोचना मेरे लिए अच्छा होगा या नहीं अर्थात् मन में विचार भी फिल्टर होकर आने चाहियें। ऐसे नहीं कि मन को कचरा-पात्र बना कर जितना भी कचरा संचार माध्यमों द्वारा आये, अन्दर भर दिया जाये। ❖

संगीत का असर

❍ ब्रह्माकुमार लोकपाल परमार, टीकमगढ़

मैं ने एक दिन अपने मित्र को ईयर फोन से गाना सुनते हुए बड़ी दुखद स्थिति में देखा। पास जाकर पूछा, क्या बात है, बड़े दुखी लग रहे हो? उसने कहा, दुख की तो कोई बात नहीं है परन्तु मैं जो गाने सुन रहा हूँ उनका शीर्षक है 'गम के आँसू', इन गानों ने जीवन के पिछले 30 सालों की दुखद घटनाओं को ताजा कर दिया है। मैंने सोचा, यह कैसा मनोरंजन है? मनोरंजन का तो अर्थ होता है मन + रंज + न अर्थात् जिससे मन का रंज दूर हो, मन में रंज न रहे परंतु यह तो उल्टा हो रहा है, मन और ही रंज में डूब गया। गायक कलाकर गानों को प्रभावशाली बनाने के लिये जिस भाव का गाना होता है, उसी भाव में स्थित होकर गाते हैं, संगीत भी उसी भाव को लिए होता है अत: जब-जब ये गीत बजेंगे, वातावरण में उसी प्रकार के प्रकम्पन फैलेंगे।

अश्लील गीत, लील देते हैं सुख-शान्ति को

जैसे गम के गीत हैं उसी प्रकार और भी तरह-तरह के गीत लोग सुनते हैं। अश्लील गीत आत्मा की असली संपदा – सुख, शान्ति, पवित्रता को ही लील (नष्ट) जाते हैं। इन गीतों की गंदगी अंतर्मन में जाकर वहाँ दबी जन्म-जन्म की गंदगी को ऊपर ले आती है। जिस प्रकार के शब्द होंगे उसी प्रकार के संकल्प चलेंगे, मन में दृश्य आएंगे और अश्लील कर्म करने के लिए प्रेरित करेंगे। अत: कानों द्वारा किसी भी प्रकार की गंदगी को अंदर न जाने दें। यह कहकर कि हम तो मनोरंजन के लिए सुन रहे हैं, इन गीतों के कुप्रभाव से हम बच नहीं सकते। इसके विपरीत, प्रभु-प्रेम से भरपूर गीत सुनने से तो खोई हुई सुख-शान्ति वापस लौट आती है।

हिंसक फिल्मी दृश्यों की नकल

वर्तमान समय फिल्मों में हिंसा की भरमार है। क्रोध की प्रवृत्ति को फिल्मों के पात्र हिंसक गीतों के माध्यम से प्रदर्शित करते हैं। जब हम ये गीत सुनते हैं तो हमारे अंदर भी क्रोध के संकल्प चलते हैं, कालान्तर में हिंसक कर्म भी हो सकते हैं। किसी फिल्म का नायक जब प्रेम-प्रसंग में असफल हो जाता है या उसके परिवार के किसी सदस्य पर खलनायक द्वारा ज्यादती हो जाती है तो वह हिंसा से भरकर गीत गाता है, 'खुद को मिटा दूँगा, दुनिया को जला दूँगा।' हमारे जीवन में भी इसी तरह की कोई घटना यदि घट जाती है तो हम उसी नायक की नकल करने की कोशिश करते हैं जबकि फिल्मों में सब काल्पनिक होता है। कई हिंसक वारदातों के पीछे कोई न कोई हिंसक फिल्मी दृश्य या गाना होता है। यदि हम परोपकार, दया, सद्‌भावना से परिपूर्ण गीत सुनें तो समाज से दुख, हिंसा, अपराध कम होकर समाप्त हो सकते हैं।

गीत-संगीत का स्वास्थ्य और प्रकृति पर प्रभाव

नकारात्मक गीत सुनने पर मस्तिष्क की हाईपोथेलेमस ग्रंथि ऐसे रसायन स्त्रावित कर देती है जिससे सिरदर्द, अनिद्रा, घबराहट, तनाव, अशांति उत्पन्न हो जाती हैं। इसके विपरीत, अगर हम सकारात्मक गीत सुनते हैं तो तन-मन प्रफुल्लित रहते हैं। सकारात्मक गीत-संगीत न सिर्फ मनुष्य पर बल्कि पेड़, पौधों, जानवरों पर भी प्रभाव छोड़ता है। यौगिक खेती के अंतर्गत खेतों में, बगीचों में जब मूल्यनिष्ठ, सकारात्मक गीतों को बजाया गया तो फलों,

फूलों, अनाज की गुणवत्ता का स्तर बढ़ गया। कृष्ण की बाँसुरी की धुन पर गायें दौड़ी चली आती थी। विषधर नाग भी बीन की तान पर मदमस्त हो जाता है। वर्षा के रिमझिम संगीत को सुनकर मोर भी पंख फैलाकर नाचने लगता है। मुरली की धुन, शंख ध्वनि, झरनों की आवाज, ओम ध्वनि, मंदिरों के घण्टों की ध्वनियों में हीलिंग पावर होती है। ये वातावरण की नकारात्मक ऊर्जा को नष्ट करती हैं।

मुख का बाजा सही रखें

मुख को भी वाद्य यंत्र कहा गया है। अगर इससे मीठे बोल रूपी स्वर निकलते हैं तो दिलों को शीतलता प्रदान करते हैं, उमंग-उत्साह बढ़ाते हैं। मुख रूपी बाजे को सही रखने के लिए परमात्मा शिव ने चार बातें बताई हैं, **कम बोलो, धीरे बोलो, मीठा बोलो और सोचकर बोलो**। अत: मुख से मधुर स्वर ही निकालें। कहा भी जाता है, **'वाणी तो अनमोल है जो कोई जाने बोल, हिए तराजू तोलकर तब मुख बाहर खोल।'**

सतयुगी संगीत

अनेक देवी-देवताओं के हाथों में वाद्य-यन्त्र दिखाये गये हैं जैसे नारद जी के हाथ में खड़ताल, श्री सरस्वती के हाथ में वीणा, श्रीकृष्ण के हाथ में बाँसुरी। इससे सिद्ध होता है कि देवी-देवतायें भी संगीत प्रेमी थे। सतयुग में संगीत कैसा होगा, इस पर सतयुगी सृष्टि के रचयिता परमात्मा शिव ने बताया है कि सतयुग में नेचुरल संगीत होता है। कलकल करते झरने, पंछियों की मीठी बोली तथा पत्तों के हिलने से संगीत की स्वर लहरियाँ निकलती हैं, जो तन-मन को प्रफुल्लित रखती हैं। ❖

कर्म द्वारा गुणों का दान

ब्रह्माकुमारी जयन्ती, धारवाड़ (कर्नाटक)

गाँव के एक डॉक्टर का स्वभाव बहुत शांत था। एक दिन वे घर में अति आवश्यक कार्य में थे, तभी हॉस्पिटल से फोन आया, तुरन्त आइये। अपना कार्य आधा ही छोड़कर वे हॉस्पिटल में भागकर पहुँचे। वहाँ उन्हें मालूम हुआ कि तुरन्त एक ऑपरेशन करना है। उन्होंने नर्स को आवश्यक बातें समझाईं और खुद ड्रेस बदलकर ऑपरेशन थिएटर के पास पहुँच गये। वहाँ बीमार बच्चे के साहूकार पिता डॉक्टर की राह देखते हुए क्रोध में इधर से उधर चक्कर लगा रहे थे। जब डॉक्टर पास आ गये तो क्रोध से कहने लगे कि क्यों आप इतनी देर से आये? आपको पता नहीं, मेरे बच्चे के प्राण जा रहे हैं, अपनी जिम्मेवारी की आपको कुछ खबर है या नहीं? डॉक्टर ने कहा, शांत हो जाइये, मैं घर से जितना हो सका जल्दी आया हूँ, मुझे माफ कर दीजिए। फिर मुसकराते हुए कहा, मैं प्रार्थना करता हूँ कि भगवान आपके बेटे की रक्षा करें। बेटे का पिता कहता है, अगर आपके बच्चे के प्राण जाने वाले होते तो आप क्या करते? डॉक्टर ने फिर भी थोड़ा-सा मुसकराकर शान्ति से उत्तर दिया, किसी को दुख देना मेरी सेवा नहीं है, पुण्य का काम करने में ही निरत रहता हूँ। ऐसा कहकर अंदर चले गये।

दो घंटे के बाद डॉक्टर खुशी से बाहर आते हैं और बेटे के पिताजी से शान्ति से और मुसकराहट से हाथ मिलाते हैं, बधाई देते हैं कि ऑपरेशन सफल हुआ, आपके पुण्य कर्म के फल और भगवान की कृपा से बच्चा बच गया। बेटे का पिता आनंदित हुआ और डॉक्टर को धन्यवाद दिया। डॉक्टर एक भी शब्द बोले बिना चले जाते हैं। बेटे के पिता को आश्चर्य लगा और नर्स को ज़ोर से कहा, कितना अहंकारी डॉक्टर है! मेरे धन्यवाद को स्वीकार नहीं किया। रोते हुए नर्स ने बताया, डॉक्टर का इकलौता बेटा कल रात दुर्घटना में मर गया, आज उसका अन्तिम संस्कार करने के लिए डॉक्टर घर में थे। हमारा फोन जाने के बाद डॉ.संस्कार कर्म को आधे में छोड़कर आये और आपके बेटे का ऑपरेशन किया और अभी संस्कार कार्य सम्पन्न करने के लिए गये, तो इसमें अहंकार की क्या बात है? यह सुनकर बेटे के पिताजी को पश्चाताप हुआ और प्रण किया, मैं भी सब काम शांति से करूँगा, कैसी भी परिस्थिति आये, मुसकराता रहूँगा। कभी क्रोध नहीं करूँगा और डॉक्टर से क्षमा मांगने के लिए भागा। डॉक्टर के शान्ति के गुण से क्रोधी भी परिवर्तन हो गया। यही है कर्म द्वारा गुणदान। ❖

आध्यात्मिकता – सच्ची धर्मनिरपेक्षता

ब्रह्माकुमारी ऋतु, छतरपुर (म.प्र.)

संसार के सभी धर्मों की स्थापना मानव जीवन में प्रेम, शांति, एकता, सद्भावना, मेल-मिलाप, भाईचारे जैसे सद्गुणों को लाने के लिए हुई। गौतम बुद्ध ने बौद्ध धर्म के माध्यम से करुणा का, महावीर स्वामी ने जैन धर्म के माध्यम से अहिंसा का, क्राइस्ट ने ईसाई धर्म के माध्यम से प्रेम एवं सेवा का, सनातन धर्म ने पवित्रता एवं सत्कर्म का तथा मुस्लिम धर्म ने अल्लाह के सब बंदों में एकता तथा भाईचारे का सन्देश देकर गिरते संसार को थामा।

सभी धर्मों का आधार है कोई न कोई जीवन-मूल्य

सभी धर्मों का मूल आधार कोई न कोई जीवन-मूल्य ही है। स्थापना के समय सभी धर्म सतोप्रधान स्थिति में थे, मानवता के लिए कल्याणकारी थे किंतु समय बीतने पर जब इनका रूप तमोप्रधान, विकृत हो गया तब ये आधारभूत मूल्यों से हटकर बाह्य रीति-रिवाज, कर्मकाण्ड और आडम्बरों का रूप बनकर रह गये और हितकारी स्वरूप से हटकर भेदभाव, टकराव का कारण भी बन गये। इतिहास इस बात का साक्षी है कि सबसे ज्यादा झगड़े, मारकाट, हिंसा और युद्ध धर्मों के नाम पर ही हुए हैं, भले ही ऐसे कुकृत्यों के पीछे उद्देश्य धन, पद, मान्यता आदि के स्वार्थ का रहा हो। बुराइयों के घुन ने धर्मों की दिव्यता को नष्ट कर डाला। इसलिए अरस्तू जैसे दार्शनिक ने जीवन-मूल्यों से रहित धर्म को अफीम कहा क्योंकि अफीम की तरह इसके नशे में व्यक्ति, सही-गलत को न समझ, किसी के भी बहकाने-भड़काने पर मरने-मारने को उतारू हो जाता है।

धर्मों का संवेदनशील रूप

आज की ऐसी स्थिति को देख धर्मों की सच्चाई तथा उनके कल्याणकारी स्वरूप पर प्रश्नचिन्ह लग गया है। पढ़े-लिखे, समझदार लोग धर्मों के इस खतरनाक, अति संवेदनशील तथा बनावटी रूप को देख इनमें श्रद्धा न रख नास्तिक बनते जा रहे हैं। मरते व्यक्ति की जान बचाने के लिए ब्लड बैंक से खून लेते समय हमने कभी यह सवाल नहीं किया कि यह खून हिंदू का है या मुस्लिम का? जब मौत के समय भेदभाव नहीं करते तो फिर जिंदगी में भेदभाव किसलिए? सभी धर्मों में नैतिक मूल्यों की सुंदरता छिपी है। हम इन्हें ही देखें, सराहें तथा जीवन में धारण करें। हमारी संकुचित मानसिकता ने ही धर्मों को अति संवेदनशील, खतरनाक बना दिया है। यदि दो बच्चों में खेल-खेल में झगड़ा हो जाये तो इसे सुलझाना बहुत ही आसान बात है किंतु यदि एक बच्चा हिंदू तथा एक मुसलमान हो तो यह मामूली से झगड़े रूपी चिंगारी दोनों परिवारों की सीमाओं से निकलकर, दोनों के धर्म-संप्रदाय के लोगों में फैलकर विध्वंसकारी आग का रूप भी ले सकती है। यह है आज के धर्मों का अति संवेदनशील स्वरूप। आज के ऐसे कट्टर, क्रूर मानव जगह-जगह समस्याएं खड़ी कर रहे हैं, उनसे तो पक्षी बेहतर हैं जो बिना भेदभाव के मंदिर पर भी बैठते हैं और मस्जिद पर भी। इसलिए कहा है –

ये पेड़, ये शाखें, ये पत्ते भी परेशान हो जायें।
गर परिंदे भी हिंदू और मुसलमान हो जायें।।

धर्मनिरपेक्षता के नाम पर श्रेष्ठ मूल्यों का त्याग न करें

भारत की शासन व्यवस्था धार्मिक मतभेद, टकराव से

मुक्त, न्यायपूर्ण, जन कल्याणकारी हो, इसके लिए स्वतंत्रता के बाद संविधान में धर्मनिरपेक्षता को अपनाया गया। सकारात्मक रूप में इसका अर्थ है कि सभी धर्मों के लोग, दूसरों के धर्मों का सम्मान करते हुए, अपने धर्म विशेष को मानने तथा उसके विकास के लिए स्वतंत्र हैं। शासन किसी धर्म विशेष को न मानकर धर्म को शासन व्यवस्था से अलग रखता है। किंतु इसका अर्थ यह नहीं है कि हम धर्मनिरपेक्षता के नाम पर उन श्रेष्ठ नैतिक मूल्यों को भी त्याग दें जिन पर ये धर्म आधारित हैं। धर्मनिरपेक्षता का यह नकारात्मक स्वरूप है जिसका घातक प्रभाव नैतिक पतन के रूप में आज हम शिक्षा, व्यापार, राजनीति, चिकित्सा आदि हर क्षेत्र में देख रहे हैं। इसका समाधान है, हर क्षेत्र में लुप्त होते जीवन-मूल्यों का फिर से समावेश किया जाए। सद्‌गुण ही हर इंसान का सच्चा धर्म है।

जीवन-मूल्यों का स्रोत है परमात्मा

धर्मनिरपेक्षता की आड़ में, ईश्वर तथा धर्म के विषय में अज्ञानता होने के कारण चालाक, स्वार्थी लोग भोले-भाले प्रभुप्रेमी, धर्मप्रेमी लोगों की भावनाओं का हिंसक कार्यों में दुरुपयोग करते हैं। भ्रम और स्वार्थ ने धर्मों की दिव्यता को नष्ट कर दिया है। इसका निवारण आध्यात्मिकता है जो सब धर्मों का सार है। यह हमें दैहिक भेदभावों से ऊपर उठाकर, सत्य आत्मिक पहचान के साथ मूल गुणों की ओर लौटाती है। जैसे सूर्य एक है, जो सभी को बिना भेदभाव के धूप, प्रकाश देता है, ऐसे ही हम सभी आत्माओं का प्यारा पिता, विश्व विधान का रचता, सब सद्‌गुणों, जीवन-मूल्यों का स्रोत परमात्मा एक है। उन्हें ही सब धर्मपिताओं ने गॉड, अल्लाह, खुदा, वाहेगुरु, भगवान, ईश्वर आदि नामों से पुकारा तथा अंगुली से ऊपर की ओर इशारा कर उन्हें याद करने का संदेश दिया। कुरान, बाइबिल, गीता, गुरुग्रंथ साहब आदि धर्मशास्त्र उनके ही गुण गाते हैं, सब देवी-देवताओं ने भी उन्हीं निराकार ज्योतिस्वरूप को याद किया।

धरत परिये धर्म न छोड़िए

परमात्मा पिता अब महापरिवर्तन के समय, संगमयुग पर अवतरित हो देह के सब धर्मों से अर्थात् दैहिक पहचान जो दुख, अशांति का कारण है, से निकाल सत्य आत्मिक पहचान के साथ आत्मा के मूल गुणों में वापिस लौटाते हैं। आत्मिक गुण ही हम आत्माओं का सच्चा स्वधर्म-सत्‌धर्म है। हमें किसी भी परिस्थिति में आत्मिक मूल्य नहीं छोड़ने हैं इसलिए कहा गया है, धरत परिये धर्म न छोड़िये, जिसका अर्थ हमने धार्मिक कट्टरता से ले लिया है। देह पर आधारित भेदभाव वाली पहचान परधर्म है और आत्मिक पहचान स्वधर्म है। इसलिए कहा गया है, स्वधर्म में सुख तथा परधर्म में दुख है। ईश्वर द्वारा स्थापित आध्यात्मिक ज्ञान द्वारा हम आपस में प्रेम, एकता, भाईचारे के गुण जगाकर, संसार में वसुधैव कुटुम्बकम्, शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व तथा जिओ और जीने दो की भावना स्थापित करते हैं। सच्ची धर्मनिरपेक्षता, धार्मिक भेदभाव-टकराव से बचाकर प्रेम, एकता आदि सद्‌गुणों का विकास करती है। यही सब धर्मों का मूल लक्ष्य भी है। ❖

इक्कीस जन्मों की राजाई

ब्रह्माकुमारी सरोज गुप्ता, इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश)

इस रंग भरी दुनिया में लगते सब जोकर,
अमृतबेला तो दूर, दस बजे उठते सोकर।

सिगरेट पीते, बेड-टी लेते, नहीं मुँह धोकर,
बंगला-कोठी, ए.सी., बाइक और मोटर।

बिजली ना हो तो फिक्र नहीं, चलता जनरेटर,
हर काम के लिए हैं हाजिर बीसों नौकर।

फिर भी शान्ति नहीं है, खाते दर-दर की ठोकर,
अरे, इक बार तो देख लो, बापदादा के होकर।

वर्सा मिलेगा, अर्थ की चिन्ता और मोह के बन्धन खोकर,
लूट सको तो लूट लो, इक्कीस जन्मों की राजाई-मोहर।

लौकिक कर्म करते, केवल बाबा की याद का है जौहर,
घर बैठे, तुमको मिल जायेगा शौहर का शौहर।

जिसका साथी है भगवान

❍ ब्रह्माकुमारी धनश्री, हाली, उदगीर (महाराष्ट्र)

सन् 1997 में एक ब्रह्माकुमारी बहन हमारे गाँव में आई और सभी को ईश्वरीय ज्ञान का कोर्स करने के लिए कहा। मैं भक्ति करती थी इसलिए सोचा, जाकर भगवान के दो-चार महावाक्य सुन लूँ और कोर्स करने के लिए चली गई। कोर्स के तीसरे ही दिन मुझे आत्मिक स्थिति का अनुभव हुआ और खुद भगवान सृष्टि पर आकर सत्य ज्ञान सुना रहे हैं, यह दृढ़ निश्चय हुआ। बाद में सन् 2000 में मुझे मधुबन (आबू पर्वत) जाने का सुनहरा मौका मिल गया लेकिन जैसे ही मधुबन से वापस लौटी, लौकिक संबंधियों की ओर से कठिन परीक्षा आने लगी, वे तीव्र विरोध करने लगे और सेवाकेन्द्र पर जाने के लिए मना करने लगे।

तामसिक आहार से बच गई

पति मुझे अपनी बहन के घर और फिर मेरी बहन के घर ले गए और कहा, इन दोनों ने भी बहुत भक्ति की है पर तुम्हारी तरह सेवाकेन्द्र नहीं जाती हैं। मुझे रात-रात भर जागकर उन सबकी अनेक बातें सुननी पड़ती थीं। मेरे पति और उनकी बहन ने प्याज, लहसुन जबरदस्ती से मुझे खिलाने की कोशिश की पर मैं छत पर जाकर बाबा से रूहरिहान करने लगी कि बाबा, आप ही मेरे संसार हो, सब कुछ हो, आप ही बताओ, अब मैं क्या करूँ? बाबा की सुझाई युक्ति से मैं तामसिक आहार से बच गई। बहन और मेरे पति आपस में चर्चा करने लगे, इसको रातभर समझा कर भी कुछ फायदा नहीं हुआ।

दीये से दीया जलता है

बाबा ने मुरली में कहा है, भले ही बर्तन मांजने का काम क्यों ना करो लेकिन पवित्र जीवन व्यतीत करना है। यह बात मेरे दिल में छप गई। मैंने सोच लिया कि कुछ तो करना पड़ेगा इसलिए दोपहर में पति जब बाहर चले जाते तो मैं कपड़े सिलाई का काम सीखने लगी। सन् 2006 में मुझे फिर से बाबा से मिलने का सुअवसर मिला। बाबा ने एक मुरली में कहा है, वाणी से भी तेज मनसा सेवा है इसलिए मैं बीच-बीच में आत्मिक ज्योतिस्वरूप स्थिति में टिककर और पति को भी आत्मा रूप में इमर्ज कर कहती थी, जागो, आपको विश्व का कल्याण करना है क्योंकि कहा जाता है, दीये से दीया जलता है। मैंने लगातार तीन साल तक मधुबन में जाकर दिल से बाबा की सेवा की, इसका फल मुझे मिलने लगा।

असंभव हुआ संभव

बाबा ने कहा है, कैसी भी आत्मा हो उसे प्यार से समझाओ तो वो समझ जाती है इसलिए मैंने सोचा कि कपड़े सिलाई करके जो भी पैसा जमा किया है, उस पैसे से पति को मधुबन भेज दूँ लेकिन उन्होंने मधुबन जाने से इन्कार कर दिया और कहा कि तुम्हें जो करना है, करो, मैं कहीं नहीं जाऊँगा। मेरे बच्चे ने हिम्मत देकर उनकी टिकट बनवाने को कहा। पति को मैंने कह दिया कि आपको अप्रैल, 2011 को मधुबन जाना ही है। आश्चर्य की बात, पति मधुबन जाने के लिए तैयार हो गये और मधुबन में उन्हें राजयोग का कोर्स करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। उन्हें भी ईश्वरीय ज्ञान पर विश्वास होने लगा। फिर तो क्या, पति भी नियमित मुरली क्लास करने लगे, उन्हें भी दिव्य अनुभव होने लगे। आखिर उन्हें भी प्यारे परमपिता परमात्मा से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। जनवरी, 2012 को यह असंभव घटना संभव हो गई। शुक्रिया बाबा, शुक्रिया! ❖

ब्र.कु. आत्मप्रकाश, सम्पादक, ज्ञानामृत भवन, शान्तिवन, आबू रोड द्वारा सम्पादन तथा ओमशान्ति प्रिन्टिंग प्रेस, शान्तिवन -307510, आबू रोड में प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के लिए छपवाया। संयुक्त सम्पादिका - ब्र.कु. उर्मिला, शान्तिवन
E-mail : omshantipress@bkivv.org, gyanamritpatrika@bkivv.org Ph. No. : (02974) - 228125